बाल निर्माण की कहानियाँ

६



बाल निर्माण की कहानियाँ

(भाग-६)



लेखिका

डॉ० आशा 'सरसिज'



प्रकाशक

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं०- २५३०२००



पुनरावृत्ति सन् २०१४ मूल्य : ११.०० रुपये

विषय सूची



घास की चोरी और जमाखोरी

अभयारण्य में खरगोशों की एक बस्ती थी । वहाँ अनेकों खरगोश अपने–अपने परिवारों के साथ रहा करते थे । उनका मुखिया भी बड़ा दयालु, परोपकारी और सबकी सहायता करने वाला था । अतएव सभी सुख–शान्ति से रहा करते थे ।

खरगोशों का मुखिया पुनीत सभी खरगोशों को अनेक अच्छी बातें बताया करता था । वह प्रायः कहता था–'भाइयो ! चाहे हमारे पास सुख–सुविधा की कम सामग्री हो, पर हम सभी मिल–जुलकर प्रेम से रहें । दुःख–मुसीबत में एक–दूसरे की सहायता करें । सभी की भलाई चाहें । कभी किसी का बुरा न सोचें । जीवन का यही सबसे अच्छा मार्ग है ।'

मुखिया की बात को अधिकतर खरगोश बड़े ध्यान से सुनते थे और वैसा ही बनने की कोशिश भी किया करते थे । ठीक भी है जो अच्छी बात सुनी भर जाये, पर उसका पालन न किया जाये वह निरर्थक ही है ।

एक बार अभयारण्य में बरसात के मौसम में एक बूँद भी पानी नहीं पड़ा । इसका फल यह हुआ कि सारी की सारी घास और वनस्पति सूखने लगीं, पर खैर वहाँ पर इतनी घास थी कि सूखा पड़ने पर भी सभी खरगोश थोड़ा–बहुत खा सकते थे । उनके बिल्कुल भूखा रहने की स्थिति नहीं आयी ।

पूरी बस्ती में चन्दू खरगोश अपनी चालाकी के लिये प्रसिद्ध था । वह बड़ा ही धूर्त था । काम करने में आलसी था । चालाकी से दूसरों की चीजें हड़पता रहता था । अतएव उससे सभी दूर रहना चाहते थे । चन्दू ने सोचा कि सूखा पड़ रहा है । यही अच्छा मौका है, जब मैं अमीर बन सकता हूँ । बस दूसरे ही दिन से उसने अपनी योजना शुरू कर दी । रात के अन्धेरे में और सन्नाटे में जब सारे खरगोश अपने–अपने बिलों सोये पड़े रहते तो

चन्दू अपनी पत्नी और चार बच्चों के साथ निकल पड़ता । रात भर वे अपने पैने दाँतों से घास काटते । फिर अंधेरे में ही गट्ठर बनाकर अपनी-अपनी पीठ पर लाद कर घर की ओर चल देते । रोज उनका यही काम था । धीरे-धीरे चन्दू के गोदाम में ढेरों घास जमा हो गयी ।

पहले तो अन्य खरगोशों ने घास के कम होने पर ध्यान नहीं दिया, पर जब वह बहुत कम हो गयी तो उनका ध्यान इस ओर गया । सभी आश्चर्य में थे कि उन्होंने इतनी घास इतनी जल्दी खा ली । एक दिन अचम्भे की सीमा न रही, जब उन्होंने देखा कि सारी घास नदारद थी ।

अब तो सारे खरगोश बड़े परेशान हुए । वे खुद तो एक-दो दिन भूखे रह सकते थे, पर उनके बच्चे तो भूख से बिलबिला रहे थे । आखिर वे सब मिलकर मुखिया के पास जा पहुँचे और रो-रोकर कहने लगे-'बच्चों की भूख हमसे तो देखी नहीं जाती और हम भी कब तक भूखे रहेंगे ? लगता है अब हम सभी की मौत आने वाली है । वर्षों से हम इस वन में रह रहे हैं, पर ऐसा अकाल तो न कभी देखा और न सुना । अब आप ही बताइये कि हम क्या करें, कहाँ जायें ?'

सभी खरगोशों की बात सुनकर मुखिया भी रो पड़ा । वह बोला'-'भाइयो ! जो स्थिति तुम्हारी है वही मेरी भी है, पर दुःख में घबराने से काम नहीं चलेगा । संकट का जब हम मन को स्थिर बनाकर बहादुरी से सामना करते हैं, तभी उस पर विजय पाते हैं ।'

'सो तो है ही !' खरगोश एक साथ बोले । फिर आगे कहने लगे-'आप बताइये हम क्या करें ?'

पुनीत बोला-'मुझे बड़ा आश्चर्य है कि इतनी सारी घास आखिर गयी तो गयी कहाँ ? मैं सोचता था कि उससे हम सभी का काम चल जायेगा ।'

'हमें भी बड़ा अचम्भा है, हम भी यही सोचते थे ।' सब के सब खरगोश बोले ।

'खैर ! मैं कोई न कोई हल निकालने की कोशिश करूँगा ।'

पुनीत बोला । फिर उसने सभी खरगोशों को शाम को इकट्ठा होने की बात कहकर विदा किया ।

पुनीत ने अपने मित्र अभय को बुलाया । उसके कान में कुछ समझाया । अभय एक-एक करके सभी खरगोशों के घर गया । सभी को उसने मुखिया का यह संदेश दिया कि शाम को प्रत्येक खरगोश को अपने पूरे परिवार के साथ उत्तरी मैदान में इकट्ठा होना है । वहाँ सभी की एक सभा होगी और उसमें संकट से निपटने का उपाय सोचा जायेगा ।

पूरी बस्ती का चक्कर लगाने के बाद अभय पुनीत के पास गया और बोला-'दोस्त ! तुम्हारा चन्दू के ऊपर संदेह ठीक ही लगता है । जब मैं उसके घर पहुँचा तो घास की बहुत तेज महक आ रही थी । साथ ही रास्ते में काँटों की झाड़ियों के पीछे यह भी सुना था कि चन्दू का बेटा दूसरे खरगोशों के बच्चों से कह रहा था कि मेरे पिताजी बहुत दूर से थोड़ी-सी घास लाये हैं । यदि तुम्हें जरूरत हो तो ले सकते हो, पर इसके बदले घर का कीमती सामान तुम्हें हमें देना होगा ।'

अब तो पुनीत के संदेह की और भी पुष्टि हो गयी । शाम को भरी सभा में पुनीत ने कहा-'मित्रो ! हमें संदेह है कि किसी ने घास की चोरी की है । यदि कोई ऐसे सज्जन यहाँ हों तो तुरन्त बता दें । उनका अपराध क्षमा कर दिया जायेगा ।

पुनीत की बात सुनकर सभी चुप बैठे रहे । पुनीत फिर बोला-'देखिये ! गलती को मानना दोष नहीं होता । गलती तो सभी से हो जाती है, पर उस गलती को स्वीकार न करना अपराध है । इस समय जब हम सभी के प्राण संकट में हैं तो जमाखोरी करना भयंकर पाप है ।'

सभी खरगोश हाथ हिला-हिलाकर कहने लगे कि उन्होंने घास की चोरी नहीं की है ।

पुनीत को बड़ा गुस्सा आया । वह बोला-'ठीक है ! अब आप एक-एक करके खड़े होकर यह बात दुहरायें ।'

अब एक-एक करके प्रत्येक खरगोश अपने दोनों पैरों पर

खड़ा होता, दोनों हाथ जोड़ता और कहता–'मैं अपनी पत्नी और बच्चों की कसम खाकर कहता हूँ कि मैंने यहाँ की घास नहीं चुराई है और वह मेरे पास नहीं है ।'

अन्त में बारी आयी चन्दू खरगोश की । बेधड़क होकर उसने भी यही बात दुहरा दी । पुनीत को बड़ा गुस्सा आया । उसकी गुलाबी आँखें गुस्से से और भी लाल हो गयीं । नथुने फड़काकर वह बोला–'सच कहते हो तुम ?'

'बिलकुल सच कहता हूँ ।' चन्दू गरदन तानकर बोला ।

'आप सभी इसकी सचाई अभी जान जायेंगे, मेरे पीछे–पीछे आइये ।' पुनीत ने कहा और तेजी से आगे बढ़ गया । सभी खरगोश उसके पीछे–पीछे चल दिये । पुनीत की आज्ञा से अभय ने चन्दू और उसके परिवार के सदस्यों के पैरों में बेड़ियाँ डाल दीं जिससे वे कहीं भागने न पायें ।

पुनीत ने चन्दू के घर के सामने रखा बड़ा–सा पत्थर हटाया और सभी अन्दर घुसे । गोदाम की किवाड़ें खुलते ही । सभी की आँखें फटी की फटी रह गयीं । वह घास से खचाखच भरा था । पूरी बस्ती के खरगोश एक महीने तक आराम से खा सकते थे ।

सभी खरगोश गुस्से से भड़क उठे । उछल–उछलकर हाथ के पंजे उठा–उठाकर वे कहने लगे–'इस नीच विश्वासघाती चन्दू को जान से मार डालेंगे हम । देखो ! इस कमीने को, यहाँ जानें जा रही हैं और यह जमाखोर बना बैठा है ।'

यह तो गनीमत थी कि चन्दू वहाँ नहीं था, नहीं तो अब तक उसकी बोटी–बोटी नुच गयी होती ।

पुनीत सभी को शान्त करके बोला–'मित्रो ! हमें किसी के प्राण लेने का तो अधिकार नहीं है । हाँ, पर चन्दू को दण्ड तो मिलेगा ही । 'अपराधी को दण्ड न देकर यों ही छोड़ देना अपराध को बढ़ावा देना' ही है । आप ही बताइये कि चन्दू को क्या दण्ड दिया जाये ?'

सभी खरगोश गर्दन हिलाकर आपस में खुस–फुस करने लगे । थोड़ी देर बाद अभय खड़ा होकर कहने लगा–'हम सभी ने यह निर्णय

लिया है कि चोरी और जमाखोरी करके, चोरबाजारी की कोशिश करके चन्दू ने जिस समाज के साथ विश्वासघात किया है, वह उसके साथ रहने योग्य नहीं है । अतएव उसे परिवार सहित अभयारण्य से बाहर निकाल दिया जाये ।'

'ठीक कहते हैं आप ! समाज में सभी एक-दूसरे की सहायता से ही रहते हैं और उन्नति करते हैं । जो सभी के साथ विश्वासघात करना चाहता है वह साथ रहने योग्य नहीं ।' पुनीत ने भी सहमति में अपनी गर्दन हिलाकर कहा ।

चन्दू और उसके परिवार को सभी के सामने उपस्थित किया गया । मुखिया ने उसे देश निकाले का आदेश दे दिया । यह सुनकर चन्दू बड़ा गिड़गिड़ाया, पर उन्होंने उसकी एक न सुनी । अन्त में अपनी रिश्तेदारी की दुहाई देते हुए बोला-'मुखियाजी ! आखिर मैं आपका साला हूँ, आपकी पत्नी का सगा भाई । क्या इस प्रकार का दण्ड देना आपको शोभा देता है ?'

पुनीत गम्भीर होकर बोला-'देखो चन्दू ! दण्ड सभी के लिये समान होता है । वह मुखिया जो भाई-भतीजावाद फैलाता है, मुखिया के आसन पर बैठने के योग्य नहीं है । उस भ्रष्टाचारी के मुखिया होने से तो मुखिया का न होना अच्छा है । फिर मैंने तो तुम्हें न जाने कितनी बार समझाया था कि तुम गलत न चलो, बुरे काम न करो, पर तुमने मेरी बात मानी ही कब ?'

अब लाचार होकर चन्दू को वहाँ से निकलना ही पड़ा । हाँ, मुखिया ने दया करके घास का एक-एक गट्ठर उन सभी को दिया, जिससे वे रास्ते में भूखे न मरें ।

घास का गट्ठर पीठ पर लादे अपने कुकर्मों को रोता, दुःखी होता चन्दू और उसका परिवार अभयारण्य छोड़कर आगे बढ़ गया । सच ही है कि कुकर्म जब किये जाते हैं तब तो वे बड़े मीठे और सुख देने वाले लगते हैं, पर जब उनका फल भोगते हैं तो वे कड़वे और असंतोष देने वाले बन जाते हैं ।

चन्दू आँखों से ओझल हो चुका था । तब तक अभय गोदाम से सारी घास निकलवाकर बाहर ला चुका था । सभी खरगोश भूखे तो

थे ही तेजी से घास पर टूट पड़े । उस दिन खूब पेट भरकर उन्होंने घास खायी । फिर वे अपने-अपने घरों की ओर चल पड़े । रास्ते में सभी मुखिया की बड़ी प्रशंसा कर रहे थे । कह रहे थे-'यदि मुखिया बुद्धिमान हो, कर्तव्य परायण हो, ईमानदार हो तो चोरी-चोरबाजारी पनप नहीं सकते । भगवान हमारे मुखिया को लम्बी आयु दे और इसी प्रकार कर्तव्य पर आरूढ़ रहने की शक्ति दे ।'

अभय भी कहने लगा-'अपनी बुद्धिमानी से उन्होंने हम सबके प्राण बचाये हैं । ऐसे नेता के लिये तो जरूरत पड़ने पर हम अपने प्राण भी हँसते-हँसते दे देंगे ।'

'जरूर-जरूर ! खरगोशों ने ताली बजाकर, खुशी से दाँत निकालकर कहा ।' मुसीबत दूर हो जाने पर आज उनकी खुशी की सीमा न थी ।

नन्दू की नौकरी

नन्दू के पिता बचपन में ही मर गये थे । उसके तीन छोटे-छोटे भाई-बहिन थे । नन्दू की माँ सारे दिन जी तोड़कर मेहनत करतीं तब कहीं जाकर उन्हें रूखी-सूखी रोटी मिल पाती ।

नन्दू तेरह ही साल का था । उसकी माँ एक दिन कहने लगी-'बेटा ! अब तुम बड़े हो गये हो । अब इस परिवार की नैया तुम्हीं पार लगाओगे । तुम्हें कुछ न कुछ कार्य खोजना होगा ।'

नन्दू के पड़ोस के गाँव में ही एक सेठ रहता था । नन्दू की माँ उससे लगातार नन्दू की नौकरी दिलवाने के लिये कहती थी । आखिर एक दिन उनका प्रयास सफल हो गया । नन्दू की नौकरी पास के शहर में एक मिठाई की दुकान पर लग गयी ।

खुशी-खुशी नन्दू घर से चला । चलते समय माँ ने उसे सौ रुपये का नोट दिया और बोली-'बेटा ! तुम्हारे लिये मैं यह रुपया महाजन से उधार लेकर आयी हूँ । तुम परदेश जा रहे हो, वहाँ न जाने कब पैसों की जरूरत आ पड़े । अतएव तुम इसे सँभाल कर रख लो । जाड़े भी आने वाले हैं, रजाई गद्दे बनवा लेना ।'

नन्दू ने भाई–बहिनों को प्यार किया, माँ के पैर छुए और थैला उठाकर चल पड़ा । रास्ते में माँ उसे समझा रही थी–'देखो बेटा ! सदा ईमानदारी से कार्य करना पैसे के लिये अपनी इज्जत और ईमानदारी मत बेचना । हाँ, यदि इनके लिये यदि पैसे से भी एक बार हाथ धोना पड़े तो उसमें भी संकोच न करना । इज्जत जब एक बार चली जाती है तो न पैसे से वापिस आती है न हजार प्रशंसाओं से ।

'माँ, सदैव यह बात याद रखूँगा ।' नन्दू ने कहा और बस में बैठ गया ।

नन्दू मिठाई की दुकान पर सारे ही दिन बड़ी मस्ती से काम करता । उसकी यह कोशिश हमेशा रहती थी कि किसी को उसके काम से, उसके व्यवहार से कोई शिकायत न रहे । मालिक भी उससे खुश रहते थे ।

नन्दू को काम करते हुए एक सप्ताह ही बीता होगा कि एक दिन दुर्घटना हो गयी । हुआ यह कि जब हलवाई रात को हिसाब मिलाने बैठा तो पूरे सौ रुपये कम पड़े । उसने बार–बार हिसाब मिलाया, पर हर बार यही बात ।

'नन्दू सौ रुपये का चक्कर पड़ रहा है । सौ रुपये न जाने कहाँ गये ? आज तक कभी ऐसा झंझट नहीं पड़ा ।' बार–बार नन्दू से यही कह रहा था

नन्दू समझ गया कि हलवाई उस पर शक कर रहा है । नन्दू को सहसा ध्यान आया कि उसके पास भी सौ रुपये ही थे । वह सोचने लगा कि नयी–नयी नौकरी है । मालिक जरूर उसकी चीजों की तलाशी लेंगे और जब उन्हें सौ रुपये ही उसके थैले में मिलेंगे तो वह सोचेंगे कि ये रुपये दुकान से चोरी किये गये हैं । उस गरीब की बात पर कोई विश्वास न करेगा । उसका इतने दिनों का सारा परिश्रम, सारी ईमानदारी धूल में मिल जायेगी । माँ की बात उसके कानों में गूँजने लगी । इज्जत और ईमानदारी बनाये रखने के लिये एक बार को यदि पैसे से भी हाथ धोना पड़े तो उसमें तनिक भी संकोच न करना ।

वह तुरन्त घर के अन्दर गया । थैले में से सौ रुपये निकाले, चुपचाप मुट्ठी में दबाये और दुकान में आ गया । नन्दू कुछ देर तक इधर-उधर रुपये देखने का बहाना करता रहा । फिर सेठजी के पास जाकर हथेली पर सौ रुपये का नोट फैलाकर बोला-'सेठजी यह रहे रुपये ।'

'अरे कहाँ मिले ?' हलवाई जो शुरू से ही उस पर शक कर रहा था, बोला ।

'यहीं पड़े थे तिजोरी के पास ।' नन्दू ने थोड़ी आँखें नीची करके कहा ।

'झूठ बोलता है ।' हलवाई ने कड़ककर गुस्से में कहा और नन्दू के गाल पर तड़ातड़ तमाचे जड़ दिये ।

नन्दू की आँखों से टप-टप आँसू झरने लगे ।

तभी सेठजी ने झकझोरकर पूछा-'सच-सच बता कि यह सौ रुपये कैसे-किस तरह गायब हुए ? नहीं तो मार-मारकर अधमरा कर दूँगा ।'

अब नन्दू फफक-फफक कर रो उठा । रोते-रोते उसने सारी सच-सच बात सेठजी को बता दी, पर सेठ भला उसकी बात पर कैसे विश्वास कर लेता ? उसने नन्दू की पीठ पर एक धौल जमाते हुए कहा-'साले ! कहानी तो गढ़ लेता है, पर हाँ आगे रुपये पैसे के मामले में जरा भी गड़बड़ी हुई तो तुझे सीधा पुलिस के हवाले कर दूँगा ।'

यह सुनकर नन्दू सिहर उठा । यदि उसने सेठ को सौ रुपये निकालकर न दिये होते तो आज वह उसे निश्चित ही पुलिस के हवाले कर देता । रुपये भी जाते और इज्जत भी । नौकरी छूटती सो अलग । गाँव भर में बदनामी होती, अपने छोटे-छोटे भाई-बहिन और माँ के भूखे और करुण चेहरे नन्दू की आँखों के आगे घूम गये । 'कोई बात नहीं, इस बार बिना रजाई-गद्दों के ही जाड़े काट लूँगा ।' वह मन ही मन बड़बड़ाया ।

उस रात नन्दू के गले से पानी की एक बूँद तक न उतरी । वह चुपचाप भूखा-प्यासा जाकर जमीन पर लेट गया । हलवाई

के परिवार का कोई व्यक्ति भी उससे कुछ पूछने न आया । अगले तीन–चार दिनों तक भी उससे ठीक से कुछ न खाया गया । दो–चार गस्से खाता और उठ जाता । सारा दिन मुँह लटकाये घूमता । यह देखकर हलवाई की पत्नी का दिल भर आया । उसने अपने पति से कहा– 'सुनिये ! कहीं ऐसा न हो कि नन्दू की बात ही सच हो । चोरी करने वाला इतना अधिक परेशान नहीं रहा करता ।'

हलवाई ने डाँटकर उसे चुप कर दिया–'तुम भी मूर्ख हो कि उसकी मनगढ़ंत बातों पर विश्वास करना चाहती हो ।'

बात आयी–गयी हो गयी, किसी ने इस पर अधिक विचार न किया । चौथे दिन हलवाई का लड़का दूसरे शहर से वापिस आया । जब सभी खाना खाकर गप–शप कर रहे थे तो सहसा नन्दू वाली बात की चर्चा हुई । हलवाई का लड़का चौंककर बोला–'अरे पिताजी ! मैं तो आपको बताना ही भूल गया था कि आप दुकान पर थे नहीं, मैं जल्दी में था इसलिये आप से बिना कहे ही सौ रुपये का नोट लेकर बाहर चला गया था ।'

'तो नन्दू निर्दोष है ।' चीखकर हलवाई और उसकी पत्नी बोले ।

'उसकी बात सच ही है ।' लड़का कहने लगा और नन्दू को आवाज लगायी ।

रात में इतनी देर गये मालिक की आवाज सुनकर नन्दू एक बार को काँप उठा । 'अब पता नहीं क्या दुर्घटना होगी ?' ऐसा मन ही मन सोचते हुए वह कोठरी से बाहर निकला और सिर झुकाकर सबके सामने खड़ा हो गया ।

हलवाई ने आगे बढ़कर उसे गले से लगा लिया और बोला–'बेटा ! तुम्हारी ही बात सच थी, हमसे बहुत बड़ी गलती हुई है । अब आगे ऐसा न होगा । हमें माफ कर दो ।'

यही नहीं, सेठ ने दूसरे ही दिन अपने पास से दो सौ रुपये दिये और बोला–'जाओ ! तुम अपनी माँ से मिल आओ और उसे रुपये भी दे आओ । सौ रुपये महाजन का कर्ज उतारने के लिये

और सौ रुपये घर का खर्च चलाने के लिये ।'

नन्दू की आँखों में कृतज्ञता के आँसू भर आये । वह यह सोच रहा था कि ईमानदारी और सूझबूझ व्यक्ति का सदैव ही आदर कराती है ।

गायों की गोष्ठी

उस दिन एक बड़े चारागाह में बहुत-सी गायें इकट्ठी हुईं । गायों के झुण्ड से पूरा चारागाह भर गया । हरी-हरी घास चरतीं, इधर-उधर घूमतीं-रँभातीं, जुगाली करती गायें बड़ी ही प्यारी लग रही थीं ।

बरसात का मौसम था । आसमान में हल्के-हल्के बादल छाये थे । ठण्डी-ठण्डी हवा बह रही थी । जब पेट भर चुका तो सारी गायें जुगाली करने आस-पास घेरा बनाकर बैठ गयीं ।

बूढ़ी सोना गाय उस दिन उदास बैठी थी । नीला से न रहा गया, वह बोली-'क्या बात है चाची ! आज तो तुम बहुत ही सुस्त बैठी हो, बीमार हो क्या ?'

सोना ने सिर ऊपर उठाया । सारी गायें आपसी बात-चीतें बन्द करके उसकी ओर देखने लगीं । सोना कहने लगी-'क्या बताऊँ बच्चियो तुम्हें ! अब मैं बूढ़ी होती जा रही हूँ न । मालिक को दूध भी नहीं दे पाती । दूध न पाने के कारण मैं मालिक के लिये बेकार हो गयी हूँ । वह मुझे दुत्कारते ही रहते हैं । डर है कि कहीं किसी कसाई को ही न दे दें । मैं तो भगवान से हर पल बस अपनी मौत की कामना करती रहती हूँ ।'

यह सुनकर काली गाय को बड़ा गुस्सा आया । वह अपने सींगों को जोर से हिलाती हुई बोली-'यह मनुष्य बड़े ही स्वार्थी होते चले जा रहे हैं । तुम्हारे मालिक के सारे बच्चे तुम्हारे ही दूध से पलकर बड़े हुए हैं । एक प्रकार से तुम उनकी माँ हुईं । तुम पर अत्याचार करने में उन्हें शर्म आनी चाहिये ।'

पीला बोली-'मैं तो एक बात पूछती हूँ कि उनके माता-पिता बुड्ढे और अनुपयोगी हो जायेंगे तो वे उन्हें भी किसी कसाई को पकड़ा देंगे ?'

'यही तो सोचने की बात है ।' श्यामा ने कहा ।

श्वेता बोली-'मैंने सुना है कि हजारों वर्ष पहले भारतवर्ष के निवासी हमें माँ कहते थे । माँ के समान हमारी पूजा और सम्मान करते थे । हम पर, हमारे बैल और बछड़ों पर उनकी सारी अर्थ व्यवस्था आधारित थी । गौ-पालन और कृषि ही उनकी जीविका का प्रमुख साधन था । सोना और काली गरदन धीरे-धीरे हिलाकर बोलीं-'सभी जीव-प्रणियों में एक ही आत्मा निवास करती है । सभी को सुख-दुःख की समान रूप से अनुभूति होती है । फिर मनुष्य न जाने क्यों हम पशुओं से बुरा व्यवहार करते हैं ?'

'तुम इनके दुर्व्यवहार की बात न कहो बहिन ! मेरी भी सुनो कि मेरे नन्हें बछड़े को दुष्ट दूध नहीं पीने देते । बछड़ा बेचारा रँभा कर रह जाता है । बचा-खुचा दस-बारह बूँद भर दूध ही उसे मिल पाता है ।' काली ने कहा ।

पीला बोली-'और मुझे मालिक पेट भर खाना नहीं देते । बस हरदम यही कोशिश करते हैं कि कैसे भी अधिक से अधिक दूध मेरे थनों से निचोड़ लें ।'

श्वेता ने कहा-'मेरे मालिक के बच्चे इतने शरारती हैं कि कभी मेरी पूँछ मरोड़ते हैं, तो कभी तंग करने के लिये डण्डे मारते हैं । मालिक हैं कि उनकी करतूत पर हँसते रहते हैं । उनसे मना तक नहीं करते, उनकी भाषा में बोल नहीं सकते तो क्या ? हम में भी प्राण हैं, हमें भी तो कष्ट होता है ।'

'बच्चे भला क्या जानें, क्या उचित है क्या अनुचित ? बच्चों को तो बचपन से ही सिखाना पड़ता है । यदि माता-पिता ऐसा नहीं करते तो बच्चे बिगड़ेंगे ही, साथ ही वे भी किसी दिन खूब पछतायेंगे ।' आभा बोली ।

नन्दा कह रही थी--'पिछले सप्ताह की ही बात है । मैं बहुत ही बीमार पड़ गयी । पूरे छः दिन मैंने कुछ न खाया । मेरा मालिक

यों तो पुचकारता रहा, पर उससे यह नहीं हुआ कि मुझे किसी डाक्टर को दिखा भी दे । कोई जड़ी-बूटी ही मुझे ला देता । घर में कोई बीमार पड़ता है तो क्या उसके लिये दवा नहीं लाते ?'

सोना कहने लगी-'सभी के साथ कुछ न कुछ समस्या है ही । हम अपनी भाषा में आँखों में मौन भाव भरकर इन मनुष्यों से न जाने क्या-क्या कहती हैं, पर लगता है मौन भावों को समझने में तो ये मनुष्य बिलकुल असमर्थ हैं या फिर ये समझकर भी नहीं समझना चाहते ।'

आभा ने गुस्से में भरकर खुरों से जमीन खोदते हुए कहा-'सुनो ! सुनाती हूँ इन सब मनुष्यों की नृशंसता की पराकाष्ठा तुम्हें । मैंने सुना है कि गाभिन का गर्भ गिराकर, बिना जन्मे बछड़े की खाल से ये मनुष्य फैशन की चीजें पर्स-सैण्डिल आदि बनाते हैं । ये चीजें बिकती भी खूब मँहगी हैं ।

'ओह यह तो राक्षसी प्रवृत्ति-अत्याचार की अति है । सभी गायें दुःख से कराह कर एक साथ चिल्ला उठीं ।'

कौन समझाये इन मनुष्यों को कि अपनी फैशन के लिये, झूठी शान के लिये वे न जाने कितने निरीह प्राणियों को दुःख देते हैं, उनकी हत्या कर देते हैं । फैशन, झूठी शान के नाम पर वे कम से कम जानवरों की खाल से बनी ऐसी चीजें तो न अपनायें, जिनमें किसी निरीह प्राणी की आहें बसी हों ।' पीला ने बड़े ही वेदना भरे स्वर में कहा ।

काली बोली-'हमें भी इन मनुष्यों की भाषा आती, तो उनसे कहते कि हम जीवन भर तो पूरी शक्ति से, पूरे मन से तुम्हारी सेवा करते हैं । जो दूध वास्तव में हमारे बच्चों के लिये है, वह सारा का सारा तुम्हें दे देते हैं । हमारा गोबर तक तो तुम्हारे लिये बेकार नहीं है । उससे तुम अच्छी खाद बनाते हो, कण्डे बनाकर ईंधन का काम लेते हो । मर जाने पर हमारी खाल तुम्हारे काम आती है । फिर तुम सबका भी यह कर्तव्य हो जाता है कि हमारे साथ बुरा व्यवहार न करो । हमें भर पेट खाना दो । हम पर बात-बात पर डण्डे मत बरसाओ । दूध न देने पर भी हमारा पालन करो ।

हमारी पहली सेवाओं को याद करके हमें कसाई को न पकड़ाओ । हम भी प्राणी हैं, हमें भी दुःख पहुँचता है । हमारे साथ वह व्यवहार न करो, जो तुम्हें अपने लिये पसन्द नहीं ।'

तभी दूर बैठा, बाँसुरी बजाता नन्दू ग्वाला गायों को घर ले चलने के लिये आ गया ।

'भगवान् इन मनुष्यों को सद्बुद्धि दे कि वे जीवों पर दया करें। सोना ने कहा और सारी गायें घर चलने के लिये उठ खड़ी हुईं ।

माँ और बच्चे

दिल्ली में कुतुबमीनार के पास शैला नाम की एक चुहिया रहा करती थी । उसके दो छोटे-छोटे बच्चे थे । एक का नाम था-चीनू और दूसरे का-बीनू । शैला दोनों बच्चों को बहुत प्यार करती थी । यहाँ तक कि वह उनके किसी काम में रोक-टोक भी न करती थी । जैसा वे चाहते करने देती, पर चीनू-बीनू की दादी को यह बात तनिक भी पसन्द न थी । वह शैला से अक्सर कहा करती-'अन्धा लाड़ भी किस काम का ? बच्चों को उतना ही प्यार करना चाहिये, जिससे बिगड़ें नहीं । उन्हें सही और गलत काम का ज्ञान कराना चाहिये । बच्चों को जब तक यह न बताया जायेगा कि क्या सही है और क्या गलत, तब तक उन्हें यह पता भी कैसे लगेगा कि वे क्या करें क्या न करें ?'

शैला बुड्ढी सास की बात को सुनी-अनसुनी कर देती ।

चीनू-बीनू को एक बड़ी गन्दी आदत थी । उसकी माँ खाने-पीने की जो भी चीजें लाती, सारी की सारी वे सामने लेकर बैठ जाते और मुँह मारने लगते । जितना खाया जाता जी भर कर खाते, बची हुई जूठन इकट्ठा करके एक ओर रख देते । रोज का ही उनका यह क्रम बन गया था । उनकी दादी को यह बात बड़ी बुरी लगती । एक दिन आखिर उन्होंने शैला से कह ही दिया-'इन बच्चों की आदत बिगड़ गयी है । खाने का यह कौन-सा

तरीका है कि यह सारी चीजें लेकर बैठ जाते हैं । जितना जी करता है खाते हैं, बची-खुची जूठन उसी में छोड़ देते हैं । जितनी चीज खानी हुआ करे, अलग निकाल कर खाया करें । जो भी चीज हो, परिवार के सभी सदस्य उसे मिल-बाँटकर खायें ।

उनकी यह बात शैला की समझ में आ गयी । फिर तो वह जो भी चीज लाती, चीनू-बीनू के लिये अलग निकालकर रख देती । चीनू-बीनू को अब कम चीज मिलने लगी थी, इसलिये उन्हें यह तनिक भी अच्छा नहीं लगता था । कभी वे पिताजी के हिस्से की रखी चीज चट कर जाते, तो कभी माँ के हिस्से की । दादी को यह बुरा लगता, तो वे कहतीं- 'अरे ! यह कौन-सा लच्छन है तुम्हारा ?' अपने हिस्से की चीज खाओ । अपनी चीज खा-पीकर दूसरों की चीज पर क्यों ललचाते हो ? अपने साथ-साथ दूसरों को भी खिलाओ-पिलाओ तो यह अच्छी बात है, पर दूसरों की भी हड़प कर खाना गन्दी आदत है ।

दादी की डाँट के आगे अब वे उसके सामने कुछ न कर पाते, पर उनकी ऐसी गन्दी आदत पड़ गयी थी कि अपनी चीज खाने के बाद भी वे ललचाते रहते । घर में रखी चीजों की कल्पना से चीनू-मीनू बेचैन हो जाते ।

एक दिन चीनू-बीनू ने सलाह की वे दादी और माँ से आँखें बचाकर चुपचाप चीजें खा लिया करेंगे । फिर क्या था वे ऐसे ही चीजें निकालने लगे । माँ को पता न लगे, इस डर से पहले वे थोड़ी चीजें लेते थे, पर धीरे-धीरे उनकी यह आदत बढ़ती ही गयी । अब वे पूरी की पूरी चट कर जाते थे और ऐसी सफाई से करते थे कि किसी को कुछ पता ही न लगता । उनसे कोई पूछता तो साफ कह देते कि उन्होंने वह चीज नहीं ली है । माँ गायब हुई चीजों के बारे में उनसे प्यार से पूछती, तो वे यही कह देते कि हमें क्या मालूम कहाँ गयी ? बार-बार उनका यह उत्तर सुनकर शैला को बड़ा गुस्सा आया । उसने दोनों को सबक सिखाने की सोची ।

शैला एक दिन मिठाई का एक बड़ा टुकड़ा लायी । उसे पता

था कि चीनू–बीनू जरूर इसकी खोज करेंगे । उसने जान–बूझकर मिठाई का वह टुकड़ा बिल के सँकरे और अंधेरे भाग में रख दिया।

चीनू–बीनू उसकी खुशबू से बावले हो उठे । वह माँ के पास गये और बोले–'माँ हमको मिठाई दो ।'

'बच्चो ! तुम्हारे पिताजी को भी आ जाने दो । सभी साथ–साथ खायेंगे ।'

बच्चे माँ से तो कुछ न बोले, पर भला उन्हें इतना धैर्य कहाँ ? माँ की आँख बचाकर चीनू यह खबर ले आया कि मिठाई कहाँ रखी है । 'चलो भैया ! जल्दी से चलकर मिठाई खायें ।' वह बीनू का हाथ पकड़ते हुए बोला ।

बीनू ने बिल के बाहर बैठी माँ की ओर इशारा किया और बोला–'बिल पर माँ बैठी है ।'

'माँ को पता भी नहीं लगेगा, और चुपचाप से जल्दी खाकर आ जाते हैं ।' चीनू ने बीनू को घसीटते हुए कहा ।

दोनों जल्दी से बिल के उस सँकरे भाग में घुस गये और मिठाई खतम करने में जुट गये । शैला इसी मौके की तलाश में थी । उसने जल्दी से जाकर लकड़ी के एक मजबूत टुकड़े से बिल का वह भाग ठीक तरह से बन्द कर दिया । चीनू–बीनू खाने में ऐसे लगे थे कि उन्हें इसका पता ही न लगा ।

चीनू–बीनू ने छककर मिठाई खाई, पर यह क्या ? इसके बाद जैसे ही उन्होंने निकलना चाहा, उन्हें रास्ता न मिला । चारों ओर से घना अन्धेरा था । लगता था मानो वे किसी गुफा में बन्द हो गये हैं । उन्होंने चारों ओर से निकलने की कोशिश की, पर सब व्यर्थ । उनके मुँह से खून निकलने लगा, पैर घायल हो गये, पर वे रास्ता न खोज पाये । बिल में लगी हुई लकड़ी को भी उन्होंने काटने की, धक्का देने की कोशिश की, पर उनके दाँत टूट गये, हाथ चिपक गये लेकिन लकड़ी टस से मस न हुई । वे समझ भी न पा रहे थे कि अचानक यह आखिर हो क्या गया । चीनू–बीनू दोनों बैठकर रोने लगे ।

रोते–रोते उनका बुरा हाल हो गया, बेहोशी छाने लगी तब कहीं

जाकर शैला ने लकड़ी हटाई । उसने बच्चों से पूछा–'अब तो नहीं करोगे चोरी ?'

चीनू बोला–'हमने कौन–सी चोरी की है ? हम तो किसी के घर कुछ भी चुराने नहीं गये ?'

शैला बोली–'किसी से बिना पूछे उसकी चीज लेना ही चोरी है । घर में तुम माता–पिता की आँख बचाकर चीजें लेते हो, वह चोरी ही तो हुई । जो बच्चा शुरू में अपने घर में चोरी करने लगता है । वह शुरू में खाने–पीने की छोटी–मोटी चीजें चुराता है, बाद में उसे बड़ी चीजें चुराने की आदत पड़ जाती है ।

'माँ प्यारी माँ ! हमें माफ कर दो । हमें अपनी गलती पता लग चुकी है । अब हम तुमसे बिना पूछे कुछ भी नहीं लेंगे । चीनू और बीनू दोनों कहने लगे ।

शैला बोली–'बच्चो ! मैं तुम्हें ज्यादा चीज नहीं दे सकती, ऐसी बात नहीं है, पर मैं चाहती हूँ कि तुम मिल–बाँटकर खाना खाना सीखो । सारी चीज खुद ही खा जाना, दूसरों को न खाने देना यह बुरी आदत है । बुरी आदत जब पड़ जाती है, तो बढ़ती ही जाती है, फिर उसे छुड़ाने में भी कठिनाई होती है । तुम अभी से आदत नहीं डालोगे तो बड़े होकर कैसे अच्छे बनोगे ? बचपन में हम जैसे बन जाते हैं, बड़े होकर वैसे ही रहते हैं । बचपन के संस्कार ही तो हमारे भविष्य को बनाते हैं ।'

'माँ हम वैसे ही बनेंगे जैसा तुम चाहती हो ।' चीनू और बीनू ने कहा और शैला से लिपट गये ।

'मेरे बच्चो, मेरी आँखों के तारो ! तुम खूब अच्छे बनो, अच्छी आदतें डालो, गुणी बनो बस यही मैं तुमसे चाहती हूँ । हम माता–पिता अपने बच्चों से यही आशा करते हैं ।' शैला ने कहा और दोनों के सिर पर प्यार से हाथ फिराने लगी ।



सजा

मनु चींटी बड़ी आलसी थी । उसके बिल की सारी चींटियाँ दिन–रात काम में जुटी रहती थीं, पर मनु कभी सिर दर्द का बहाना बनाती, तो कभी पेट दर्द का । कभी बुखार की शिकायत करती, तो कभी चक्कर आने की । इस प्रकार वह काम से बचने का कोई न कोई बहाना खोजती रहती । जब कोई बहाना न बना पाती, तो धीरे–धीरे बड़ी सुस्ती और लापरवाही से काम करती । काम को जान–बूझकर बिगाड़ने की कोशिश करती, जिससे आगे से उससे कोई काम करने को ही न कहे । वह यह नहीं सोचती थी कि ऐसा करने में उसकी अपनी हानि है । उल्टा–सीधा काम करेगी तो कोई भी उस पर विश्वास नहीं करेगा और ना ही कोई उसे प्यार ही करेगा ।

एक दिन रानी चींटी ने सभी चींटियों को आज्ञा दी कि वे सभी अण्डों को बरगद के पेड़ के पास जाकर कुछ देर धूप में रखेंगी । मनु रानी के आगे कुछ न कह पायी । मन मारकर उसे जाना ही पड़ा । पेड़ के नीचे जब सारे अण्डे रख दिये गये, तो राधा नाम की चींटी, जो श्रमिक चींटियों की नेता थी, मनु से कहने लगी–'मनु ! हमारे खाने का भण्डार खतम होने जा रहा है । अतएव हम सब खाने की तलाश में जा रही हैं । तुम्हारे पास चीनू को छोड़े जा रही हैं । तुम दोनों मिलकर सावधानी से अण्डों की रक्षा करती रहना, लापरवाही न करना । तुम्हारे ऊपर बहुत बड़ी जिम्मेदारी छोड़ रही हूँ ।'

मनु ने बड़े नखरे से अपनी गरदन हिलाकर हाँ कहा और अण्डों के पास उनकी रखवाली के लिये जाकर बैठ गयी । थोड़ी देर तक वह आराम करती रही । चीनू से बात करती रही, पर जल्दी ही उसका मन भर गया । धूप में बैठना भी मनु को अच्छा नहीं लग रहा था । वह छाया में लेटकर सोना चाहती थी ।

मनु चीनू से कहने लगी–'चीनू ! मैं जरा–सा घूमने जा रही हूँ, अभी आती हूँ ।'

चीनू बोली–'मनु ! इस समय तुम्हारा जाना ठीक नहीं है । हमारे ऊपर सारे अण्डों की सुरक्षा का दायित्व है ।'

'ओह ! अभी बस पाँच मिनट में पानी पीकर आती हूँ ।' मनु कुपित–सी होकर आँखें नचाकर बोली । बिना चीनू की ओर देखे, उसकी बात बिना सुने वह तेजी से वहाँ से चल दी ।

बरगद के पेड़ के पास जाकर मनु रुकी । ठण्डी–ठण्डी हवा आ रही थी, उसका मन प्रसन्न हो गया । पेड़ के नीचे कुछ फल भी बिखरे पड़े थे । मनु ने जी भरकर उन पके स्वादिष्ट फलों को खाया । फिर वह पेड़ की जड़ में बने छेद में होकर नीचे घुसी । वहाँ ठण्डी–ठण्डी जगह में उसने अँगड़ाई ली और हाथ–पैर पसारकर आराम से सो गयी ।

अचानक आसमान में काले–काले बादल उमड़ने–घुमड़ने लगे । चीनू चींटी को बड़ी चिन्ता हुई कि पानी आ जायेगा, तो सारे के सारे अण्डे बह जायेंगे । उसने सोचा कि अब इन्हें जल्दी से लेकर घर चलना चाहिये । चीनू ने मनु को खूब जोर–जोर से सैकड़ों आवाजें लगायीं, पर मनु सुनती कहाँ से ? वह तो बरगद की जड़ के अन्दर आराम से सो रही थी । आखिर चीनू थक गयी । उसने सोचा कि यह दुष्ट न जाने कहाँ चली गयी ? जल्दी ही कुछ करना चाहिये, नहीं तो सारे अण्डे पानी में बह जायेंगे ।

कुछ अण्डों को मुँह में दबाये, तेजी से दौड़ती–'हाँफती चीनू अपने बिल में पहुँची । वह रास्ते में इतना तेज दौड़ी थी कि उसकी साँस फूलने लगी थी, दम–सा घुटने लगा था ।

'क्या बात है चीनू ? उसे देखकर रानी चींटी चिन्ता भरे स्वर में पूछने लगी ।

चीनू ने सारी बात बताई कि किस प्रकार बरगद के पेड़ के पास अण्डे असुरक्षित पड़े हैं । पानी आने वाला है । जल्दी ही दूसरी चींटियों को भेजिये, नहीं तो सारे के सारे अण्डे बह जायेंगे ।

रानी ने तुरन्त ही चींटियों की एक लम्बी सेना अण्डे लेने के लिये भेज दी । फिर वह चीनू से बोली–'पर तुम वहाँ अकेली कैसे रह गयीं ?'

'सारी चींटियाँ खाने की खोज में गयी हैं । मेरे पास मनु को छोड़ गयी थीं, पर उसका कहीं पता नहीं । आधा घण्टे तक मैं उसे आवाज दे-देकर थक गयी । जब वह नहीं आयी तो मैं दौड़कर आयी हूँ ।' चीनू हाँफते हुए बोली । इतना कहकर वह लड़खड़ा कर बेहोश होकर गिर गयी ।

चींटियों ने मिलकर बहुत कोशिश की, पर चीनू को होश न आया । धीरे-धीरे उसकी साँसों का आना-जाना बन्द हो गया ।

रानी चींटी को बहुत गुस्सा आया । वह बोली-'चीनू के मरने का कारण वह कामचोर मनु है । उसे कठोर दण्ड मिलना ही चाहिये । कामचोर, आलसी और निकम्मा अपनी ही हानि नहीं वरन् दूसरों को भी नष्ट कर देता है । ऐसे को तो अपने साथ कभी नहीं रखे ।

सभी चींटियाँ गरदन और हाथ हिला-हिलाकर कहने लगीं-' ठीक कहती हैं आप महारानी जी ।'

खूब पानी पड़ा । बिजली कड़की उसके भी बड़ी देर बाद मनु की आखें खुली । आँख मलते-मलते वह उठी और बोली- 'अरे आज तो मैं बड़ी गहरी नींद सोयी ।' संध्या का झुटपुट हो रहा था । मनु तेजी से अपने बिल की ओर बढ़ने लगी । रास्ते में वह मन में यह सोच कर प्रसन्न होती जा रही थी-'आज तो खूब मजा आया । काम की बला खूब टली ।'

बिल में पहुँचते ही मनु की पेशी रानी चींटी के सामने हुई ।

'मनु तुम्हें बिल छोड़कर जाने की आज्ञा दी जाती है । तुरन्त ही यहाँ से चली जाओ ।' रानी चींटी गुस्से में भरकर बोली और उसने मनु को देखकर मुँह फिरा लिया ।

मनु ने ऐसी कल्पना भी न की थी । यह आदेश सुनकर वह धक-सी रह गयी और फूट-फूट कर रोने लगी, पर रानी चींटी जरा भी न पिघली । मनु अपने माता-पिता के पास जाकर खूब रोयी, पर उन्होंने कह दिया कि गलती तुमने की है । हम तुम्हारा थोड़ा-सा भी पक्ष लेकर गलत बात का समर्थन नहीं करेंगे । रानी ही तुम्हें मांफी दे सकती है ।

मनु फिर रानी चींटी के पास गयी । उसकी रही-सही आशा भी टूट गयी थी । उसे उम्मीद थी कि उसके माता-पिता उसे बचाने की कोशिश करेंगे, वे तो कुछ भी न बोले थे ।

मनु रोती हुई बोली-'महारानी जी ! मुझे माफ कर दीजियेगा ।'

'देखो मनु ! तुम बहुत ही निकम्मी-लापरवाह और कामचोर होती जा रही हो । इन अवगुणों से जीवन में कभी कोई उन्नति कर ही नहीं सकता । वे सचमुच किसी एक को ही नहीं पूरे समाज को हानि पहुँचाते हैं ।' रानी चींटी बोली ।

मनु जब बहुत रोई-गिड़गिड़ाई तो रानी चींटी कहने लगी-'दण्ड तो तुम्हें भुगतना ही होगा । तुम्हारे ही कारण हमें वफादार और मेहनती चीनू से हाथ धोना पड़ा है । तुम कह रही हो कि आगे से ध्यान से काम करोगी, लापरवाही नहीं करोगी, इसलिये तुम्हारा दण्ड कम किया जाता है । तुम एक महीने बाद बिल में फिर आ सकती हो, पर अपनी आदत सुधार कर । जो बुराइयाँ तुम दूसरों में देखती हो, जिनके लिये उनकी आलोचना करती हो, उन्हें अपने अन्दर भी न रहने दो ।'

लाचार मनु चींटी को एक महीने के लिये बिल छोड़ना पड़ा । वह अकेली पुष्कर तालाब के किनारे घूमती रहती है । न कोई उससे बात करने वाला है, न उसका ध्यान रखने वाला । वह सारे दिन काम करती रहती है, जिससे कि उसका आलसीपन छूट जाये । मनु चाहती है कि जल्दी से जल्दी एक महीना पूरा हो और अपने परिवार में जाकर हँसी-खुशी से रहे । मनु ने प्रतिज्ञा कर ली है कि अब वह कभी भी आलसी और लापरवाह नहीं बनेगी ।

बुद्धिमती चुहिया

रानी चुहिया बरगद के एक बड़े पेड़ की जड़ में अपना बिल बनाकर रहती थी । उसके चार छोटे-छोटे बच्चे थे । रानी चुहिया बड़ी मेहनती थी । वह सारे दिन परिक्रमा करती और खाने के लिये खूब सारी चीजें जुटा लेती । जंगल में खाने-पीने की कमी

भी न थी । इस प्रकार रानी चुहिया अपने बच्चों के साथ आराम से रह रही थी ।

पर एक दिन सहसा पास बहने वाली नदी में बाढ़ आ गयी । चारों ओर पानी ही पानी फैल गया । बरगद का वृक्ष भी पानी में डूबने लगा तो रानी ने घबराकर अपने बच्चों को बिल से बाहर निकाला और सभी के साथ जाकर पेड़ की सबसे ऊपर वाली टहनी की कोटर में छिपकर बैठ गयी ।

पानी था कि रुकने का नाम ही न ले रहा था । लग रहा था कि वह पूरे वृक्ष को ही डुबो देगा । अब तो रानी बहुत ही घबराई । क्या करे और कैसे अपनी और अपने बच्चों की जान बचाये ।

तभी रानी ने सुना कि पेड़ की कोटर में रहने वाला कोई कौवा अपने बेटे से कह रहा है–'लल्लू ! जल्दी ही यहाँ से चलें, पानी इस पेड़ को डुबाने ही वाला है ।'

विपत्ति में रानी का दिमाग तेजी से काम कर रहा था । वह सोचने लगी कि क्यों न इस कौवे से अनुनय कर लूँ कि मुझे यहाँ से ले चले । जैसे ही कौवा अपने बच्चे सहित घोंसले से निकला कि रानी ने जोर से पुकार कर कहा–'कौवे भाई ! तुम मुझे और मेरे भाई को भी यहाँ से ले चलो । मैं जीवन भर तुम्हारा उपकार कभी नहीं भूलूँगी ।'

कौवे ने चारों ओर गरदन घुमाकर देखा कि आवाज कहाँ से आ रही है । सहसा उसकी निगाह सिकुड़ कर बैठी रानी और डर से काँपते उसके बच्चों पर पड़ी । वह मन ही मन कहने लगा कि कोई जिये या मरे मुझे क्या ? मैंने क्या सारी दुनियाँ की रक्षा का ठेका ले रखा है ?

कौवा अपने बच्चे से बोला–'लल्लू ! तुम्हें ठीक से उड़ना तो आता नहीं । इस बाढ़ में अगर कहीं गिर गये तो बच भी न पाओगे । तुम ऐसा करो कि मेरी पीठ पर बैठ जाओ ।'

कौवा अपने बच्चे को पीठ पर बैठा कर उड़ने ही वाला था कि चुहिया फिर बोली––'कौवे भाई ! हमको भी यहाँ से ले

चलो । हम तुम्हारे इस उपकार का बदला अवश्य चुका देंगे । दूसरों की सहायता करने वालों को भगवान भी आशीर्वाद देता है ।'

कुछ सोचकर कौवा रुक गया । मीठी वाणी में बोला–'चुहिया रानी आखिर तुम समझती नहीं । दूसरों की सहायता करना और उनके प्राण बचाना आखिर किसे बुरा लगेगा ? पर मेरी परेशानी तो यह है कि मैं तुम सबको लें कैसे जाऊँगा । पीठ पर तो मेरा बच्चा बैठा है । वह खुद उड़ना नहीं जानता इसलिये उसे तो मैं उतार नहीं सकता । तुम लोग एक–दो होते तो मैं ले भी जाता । तुम हो भी तो संख्या में पाँच । आखिर मैं तुम्हें यहाँ से ले भी जाऊँ तो कैसे ?'

रानी को सहसा ही एक तरकीब सूझी । कौवे से वह बोली–'सुनो जरा रुको । तुम्हें इस विषय में अधिक चिन्ता नहीं करनी होगी ।'

रानी ने जल्दी से बरगद की एक मजबूत जटा अपने पैने दाँतों से कुतर डाली । फिर उसे जल्दी से ऊपर खींच लिया । एक–एक करके अपने चारों बच्चों के और अपने पंजे उसमें कसकर बाँध दिये ।अब वह जटा का आगे का भाग कौवे को पकड़ाती हुई बोली–"लो इसे पकड़कर ले चलो ।'

कौवे ने उसे अपनी चोंच में पकड़ा ही था कि चुहिया बोल उठी–'न भाई न ! इसे चोंच में न पकड़ो । रस्सी में पाँच जानें बँधी हैं । तुम जरा–सा भी बोले तो रस्सी छूटी और हम सब मरे । इसे तो तुम अपने पंजों में पकड़ लो, आखिर एक पंजे से रस्सी छूटेगी, तो दूसरे से कसकर पकड़ तो लोगे ।'

कोवे ने रानी चुहिया की बात मान ली । वह यह रस्सी को अपने पंजों में मजबूती से पकड़कर पीठ पर लल्लू को बिठाकर बरगद के उस पेड़ से उड़ चला ।

कौवे को यों इस प्रकार जाते देखकर अनेकों निगाहें उस पर पड़ीं । एक गिद्ध ने भी उसे देखा और उसके मुँह में पानी भर आया । उसने अपने मन में सोचा कि आज तो खूब छककर दावत

होगी । गिद्ध भी छिपकर कौवे के पीछे-"पीछे उड़ चला ।

जब पानी खतम हो गया ओर सूखी जमीन आ गयी तो कौवा आसमान से उतरा । रानी बोली-'कौवे भाई ! तुमने मेरे परिवार की जान बचाई है । मैं तुम्हारे उपकार से कभी उऋण नहीं हो सकती । मैं कभी न कभी तुम्हारी सहायता जरूर करूँगी । अब अपने पंजों से रस्सी खोलो जिससे हम सब जल्दी ही अपने रहने का ठिकाना खोज लें ।'

तभी लल्लू बोला-'पिताजी ! मुझे तो बहुत ही जोरों की भूख लग रही है ।'

कौवा कहने लगा-'आज तो मैं और तुम छककर खायेंगे । माल सामने है ।'

कौवे की बात सुनकर रानी सचेत हो गयी थी । अतएव जैसे ही कौवे ने रानी के बच्चे के चोंच लगायी, उसने जोर से अपनी पूँछ घुमाकर उसके मुँह पर दे मारी । पूँछ कौवे की पुतली पर जोर से लगी, वह तिलमिला उठा ।

रानी बोली--'ओह ! विपत्ति में पड़े हुए प्राणियों की रक्षा के बहाने तुम अपना ही स्वार्थ पूरा करना चाहते हो । धिक्कार है तुम्हें । याद रखो ! कभी तुम पर भी मुसीबत आ सकती है और तुम्हें भी दूसरों की सहायता की जरूरत पड़ सकती है । मत भूलो हम भी समाज में रहते हैं । दूसरों की सहायता की आवश्यकता हमें पड़ती रहती है । कौवे भाई, मुसीबत में तुम्हारे साथ भी कोई ऐसा ही व्यवहार करे, तो कैसा लगेगा तुम्हें ?'

कौवा तुनककर बोला-'मैं न तो परोपकारी हूँ, न कोई महान् आत्मा-जो सबकी सेवा करता फिरूँ । गलती मेरी नहीं तुम्हारी है, जो तुमने मुझ पर इतना अधिक विश्वास किया । अब तुम सबको हमारे पेट में जाने से कोई बचा नहीं सकता ।'

रानी ने सोचा कि अन्तिम बार इससे विनती करके देखती हूँ । दुष्ट को पहले बातों से ही मनाना चाहिये । यदि कहे हुए का उस पर कोई असर न हो तो फिर चतुराई से कोई दूसरा रास्ता खोजना पड़ेगा । रानी दोनों पंजों को जोड़कर विनम्रता-

पूर्वक कहने लगी–'कौवे भाई ! आखिर कुछ तो लिहाज करो । मैंने तुम्हें भाई कहा है, ये छोटे–छोटे बच्चे तुम्हारे भानजे हुए । अपने इन भानजों को क्या खा पाओगे तुम ?'

पर धूर्तों और स्वार्थियों के लिये कोई रिश्ता नहीं होता । कौवे ने रानी की एक न सुनी और सबसे पहले उसे ही खतम करने लिये चोंच आगे बढ़ायी । कोवा सोच रहा था कि यह मर जायेगी तो इसके बच्चों को बचाने वाला कोई न रहेगा और वह चैन से उन्हें खा सकेगा ।

कौवे की चोंच रानी तक पहुँची भी न होगी कि गिद्ध बीच में ही चुहिया को खाने लपका । हड़बड़ाहट में उसके पंजे से बरगद की जटा छूट गयी, पर पल भर में ही उसकी समझ में सारी बात आ गयी । वह गुस्से में भरकर गिद्ध से बोला–'इसे यहाँ तक लाने में मैंने मेहनत की है, इस पर मेरा हक है । तुम चोर–डकैत की तरह बीच मे लूटपाट क्यों करते हो ?'

गिद्ध अपनी लाल–लाल आँखें घुमाकर कह रहा था–'तुम में साहस हो तो मेरे सामने इसे खाकर तो देखो ।'

फिर गिद्ध ने जोर से कौवे के पेट में अपनी चोंच मारी और बोला–'चलो हटो यहाँ से ! मुझे खाते समय किसी की बकवास सुनना पसन्द नहीं ।'

कौवे और गिद्ध की लड़ाई का रानी ने पूरा फायदा उठाया । उसने अपने बच्चों से धीरे से कुछ कहा । सभी ने तेजी से अपने दाँतों से जटा कुतरकर अपने पंजे छुड़ा लिये और जल्दी से भागकर पास की झाड़ी में जाकर छिप गये ।

कौवे और गिद्ध की निगाह जब यहाँ गयी तो उन्होंने पाया कि शिकार का कहीं अता–पता ही न था । दोनों एक–दूसरे को लाल–लाल आँखों से घूरते हुए, हाथ मलते हुए वहाँ से उड़ गये ।

यह देखकर झाड़ी में छिपे रानी चुहिया के बच्चों ने जो अभी तक डर से काँप रहे थे, चैन की साँस ली । वे उससे पूछने लगे––'माँ ! क्या दुनियाँ में सभी ऐसे ही स्वार्थी होते हैं ?'

चुहिया उन्हें समझाने लगी–'बच्चो ! संसार में अच्छे प्राणी भी

हैं और बुरे भी । कौन कैसा होगा ? यह उससे बार-बार व्यवहार करने के बाद ही पता लगता है । किसी को परखे बिना उस पर विश्वास न करो । विश्वास होने पर भी अन्धा विश्वास न रखो । दूसरों से अधिक, अपने पुरुषार्थ पर, अपनी बुद्धि पर भरोसा रखो और उसका प्रयोग करो । तभी तुम जीवन में सफलता पा सकते हो, कठिन स्थिति से उबर सकते हो ।

तभी छोटा बच्चा बोल पड़ा-'तुम्हारी बात हम सदैव ध्यान में रखेंगे । अब खाना लाओ, जोरों से भूख लगी है ।'

'तुम सभी छिपकर झाड़ी में ही बैठे रहना इधर-उधर नहीं जाना ।' यह कहकर चुहिया उनके लिये खाने की खोज में दौड़ गयी ।

दो भाई

आगरा में लाल किला के पीछे नीम का एक पुराना पेड़ है । उस पेड़ पर कौवे रहते थे । बड़े का नाम था किशनू और छोटे का नाम था-विशू । यद्यपि वे दोनों सगे भाई थे, पर उनके स्वभाव में काफी अन्तर था । बड़ा भाई जितना सज्जन था तो छोटा उतना ही दुर्जन ।

भोर होते ही दोनों भाई भोजन की तलाश में उड़ चलते । किले के पीछे ही यमुना नदी बहती है । वहाँ प्रतिदिन स्नान करने वालों की भीड़ लगी रहती थी । स्नान करने वालों में महिलायें भी होतीं । दोनों भाई वहीं बैठते । वे अपने बच्चों को भी साथ-साथ नहलातीं । नहाने के बाद बच्चों के हाथ में रोटी, पूड़ी- मिठाई आदि दे देतीं और स्वयं पालथी मारकर, आँखें बन्द कर पूजा-पाठ करने बैठ जातीं ।

विशू तो बस इसी मौके की ताक में रहता । वह पत्तों में चुपचाप छिपकर बच्चों के खाने को घूरता रहता । अपनी एक पुतली को कभी दाँयी आँख में घुमाता तो कभी बाँयी आँख में । जैसे ही उसे किसी बच्चे के हाथ में मिठाई, पूरी, पापड़, अचार

आदि दीखते तो वह झट से चुपचाप झपट्टा मारकर उन्हें छीन लाता । बेचारा बच्चा इस आकस्मिक हमले से भौंचक्का रह जाता । वह टुकुर–टुकुर कौवे को ऊँची डाल पर बैठकर अपनाखाना खाते देखता रहता । छोटे बच्चे तो जोर–जोर से रोने ही लगते । उनके मुँह का गस्सा दूसरे के मुँह में चला जाये, उनके पेट भूख से कुलबुलाते रहें, तो भला वे रोयेंगे नहीं तो और क्या करेंगे ? किसी न किसी बच्चे के तो विशू चोंच मारकर खून भी निकाल आता था । बच्चा जब कसकर चीजें पकड़े होता तो विशू उसे झपटने के लिये यह तरकीब अपनाया करता था ।

किशनू को विशू की यह बात तनिक भी न भाती थीं । जब विशू मासूम बच्चों के हाथ से चीजें छीनकर चटकारे भरकर खाता तो किशनू का मन जल उठता । उसने उसे लाख बार समझाया था कि किसी को सताकर अपना पेट न भरो । दुखियों की आहें शाप ही देती हैं । ले सकते हो तो दूसरों की शुभकामनायें और उनके आशीर्वाद ही लो ।

पर विशू पर इन सब बातों का कोई असर न होता । उल्टे वह बड़े भाई की बात सुनकर मुँह बिचकाने लगता और कहता–'अरे छोड़ो भी ! क्या रखा है इन सब बातों में । थोड़ी–सी ही तो जिन्दगी है । जब तक जीओ खाओ, पीओ और मौज मनाओ । चीज जिसके हाथ में हो उसी की हो गयी । दूसरे की वस्तु जब हमारे हाथ में आ गयी तो हमारी ही हो गयी ।

किशनू को उसकी ये बातें सुनना बहुत बुरा लगता । लगता भी क्यों नहीं, उसका स्वभाव तो इसके बिल्कुल विपरीत था । उसे किसी को सताना तनिक भी अच्छा नहीं लगता था । उसे तो अपने परिश्रम से कमायी गयी सूखी रोटी ही मीठी लगती थी । जो भी कुछ उसे मिल जाता, उसी को खाकर खुश रहता । उसने कभी किसी के हाथ से कोई चीज नहीं छीनी थी । वह कितना भी भूखा होता सन्तोष से चुपचाप बैठा रहता । बच्चे कभी–कभी उसे एक–आध टुकड़ा डाल देते या पीछे से बचा–खुचा जो भी जमीन पर बिखर जाता उसी को खाकर वह मस्त घूमता । उसे कभी

भरपेट खाना मिल जाता तो कभी वह भूखा ही रह जाता था, पर वह उसमें भी कभी असंतुष्ट नहीं होता था ।

अब तो बच्चे भी किशनू और विशू को अच्छी तरह पहिचान गये थे । वे इन दोनों का स्वभाव जान गये थे । बच्चे एक लम्बा-सा बाँस लेकर बैठते । जैसे ही विशू को आते हुए देखते बाँस फटकार देते । विशू भी कम चालाक न था । वह उड़ता हुआ आता और चुपचाप चीज छीनकर भाग जाता । इस काम में विशू बड़ा ही निपुण हो गया था । वह इतना खाना छीन लाता था कि ठूँस-ठूँस कर दिन में कई बार खा लेता । इतना ही नहीं काँव-काँव करके दूसरे कौवों को इकट्ठा कर लेता और बचा-खुचा खाना उन्हें दे देता । फल यह हुआ कि सब विशू के आगे-पीछे फिरते, उसकी खूब झूठी प्रशंसा करते । अपनी ही तारीफ-प्रशंसा सुनकर विशू मन ही मन में फूलकर कुप्पा हो जाता था और तब दूसरे कौवे उसे और भी चीजें हड़पने के लिये प्रोत्साहित करते ।

एक बार एक चालाक बच्चे ने विशू को मारने का उपाय सोचा । वह घर से लाल-लाल फूले हुए रस भरे मालपुआ लाया था । उसने बड़ी सावधानी से थोड़ा-थोड़ा करके कटोरदान से निकालकर पुए खाये । उस दिन विशू की एक न चली । वह ललचाई आखों से उसे पुए खाते हुए देखता रहा । जब अन्तिम पुआ बच गया तो बालक ने उसमें कुछ दवा लगा दी और जमीन पर रख दिया । विशू तो बस इसी मौके की ताक में था । उसने आव देखा न ताव, पुआ पंजों में दबाया और पेड़ पर आकर बैठ गया । पुआ उसे इतना अधिक स्वादिष्ट लगा था कि दो ही बार में गपागप कर गया ।

विशू आज इतना मीठा मालपुआ खाकर बड़ा ही खुश था, पर थोड़ी ही देर में उसकी सारी खुशी धरी की धरी रह गयी । धीरे-'धीरे उसका जी जोरों से मिचलाने लगा । गला प्यास से बुरी तरह सूखने लगा । विशू अब जोर से तड़फड़ाने लगा । उसने काँव-काँव करके सारे ही कौवों को इकट्ठा कर लिया । विशु ने सारी स्थिति उन कोवों को बतलायी 'लगता है तुम्हें किसी ने जहर दे दिया है ।' एक बूढ़े कौवे ने कहा ।

उसकी बात सुनकर विशू जोर–जोर से रोने लगा । 'ओह ! मैं मरा, मुझे बचा लो ।' वह विलाप करने लगा, पर अफसोस कि किसी कौवे का दिल न पसीजा । आँख बचाकर चुपचाप धीरे–धीरे एक–एक करके वे सभी कौवे वहाँ से उड़ने लगे । दर्द और अपमान से विशू छटपटा रहा था । कराहते हुए बोला–'ओह ! मैं तुम सबको खिलाने के चक्कर में इतना खाना इकट्ठा करता था । न ऐसा करता न मेरी जान जाती ।'

हमने कब कहा था कि तुम हमें दूसरों को सता कर खिलाओ । अपनी करनी का फल तो अब तुम्हें ही भोगना पड़ेगा ।' तुनक कर एक कौवी बोली ।

आँखें बन्द किये विशू सोच रहा था–'ये वही हैं, जिनके लिये मैंने सब करनी–अकरनी कीं । इनसे वाहवाही पाने के लिये मैं दूसरों की चीजें हड़पता रहा । इनकी चापलूसी को मैंने अपनी प्रतिष्ठा, इनका प्यार और आदर समझा, पर आज मेरी आँखें खुल गयी हैं । मृत्यु की इस घड़ी में इनकी सचाई मेरे सामने आ गयी है । ओह, कितना अच्छा होता कि मैं किशनू दादा की बात मानता । सच्चाई के रास्ते पर चलता । बिना किसी का दिल दुखाये, रूखी–सूखी खाकर सन्तोष करता, पर अब पछताने से होता भी क्या है ?' दुःख और पश्चाताप से विशू की आँखों से आँसू झरने लगे । अब उस पर बेहोशी छाती चली जा रही थी ।

उसी स्थिति में विशू को लगा जैसे कोई सिर को सहला रहा है । वह सोचने लगा यह मेरा भ्रम मात्र है । भला मुझ कुकर्मी की सहायता कौन करने लगा ? सच है, बुरे काम का फल तुरन्त नहीं मिलता, पर राख में जैसे आग दबी रहती है और समय पाकर वह भयंकर रूप धारण कर लेती है, वैसे ही कुकर्मों का फल कुछ समय बाद मिलता है, पर भयंकर रूप में मिलता है ।

तभी विशू को लगा जैसे कोई आवाज दे रहा है––'विशू ! आँखें खोलो ।' हड़बड़ाकर आँखें खोलीं । देखा कि सामने किशनू बैठा था । सहानुभूति पाकर विशू की आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली ।

'लो इसे जल्दी से खा लो ।' कहकर किशनू ने पंजे में दबायी हुई कोई जड़ी-बूटी विशू को दे दी । विशू बेहोशी की सी हालत में उसे खाने लगा ।

बात यह हुई थी कि जब किशनू नदी के किनारे खाना खा रहा था, तो उसने दूसरे कौवों से यह बात सुनी कि विशू को किसी ने जहर खिला दिया है । वह मुँह का गस्सा वहीं छोड़कर तुरन्त तेजी से उड़ा । जल्दी-जल्दी में जड़ी-बूटी ढूँढ़कर तोड़ी और हाँफता-हाँफता विशू के पास पहुँचा ।

इतने में विशू को उल्टी हुई और विषैला खाना पेट से निकल गया । धीरे-धीरे बेहोशी भी दूर होने लगी । किशनू ने उसकी बहुत सेवा की । दूर-दूर से खोजकर सप्ताह भर उसके लिये जड़ी-बूटी और खाना लाया । विशू तो इतना कमजोर हो गया था कि अपनी जगह से हिल भी न पाता था । यदि किशनू सहायता न करता तो वह मर ही गया होता ।

इस घटना के बाद से तो विशू का स्वाभाव एकदम ही बदल गया है । वह अच्छी तरह से समझ गया है कि धूर्तता और चालाकी से नहीं, ईमानदारी और सचाई से चलने में ही अन्त में सुख मिलता है । जीवन का सच्चा आनन्द वही पा सकता है, जो सहानुभूति और प्रेम भरे व्यवहार से दूसरों का स्नेह और आशीष पाता है । अपने बुरे व्यवहार से औरों का दिल दुखाने वाला अन्त में स्वयं भी कष्ट निश्चित ही भुगतता है ।

अब जब भी किशनू और विशू की कोई बात चलती है, तो सभी कौवे यही कहते हैं कि दोनों भाई रंग-रूप में ही नहीं, स्वभाव और गुणों में भी एक से ही हैं । यह सब सुनकर विशू गर्व से अपना शरीर फुला लेता है ।



न्यायी राजा

अभयारण्य में प्रताप नाम का सिंह राज्य करता था । राजा को राजकार्य में सहायकों की, मंत्रियों की जरूरत होती ही है । प्रताप के भी अनेक मंत्री थे । प्रताप मंत्रियों का चुनाव बड़ा ही सोच–विचार कर करता था । जो अच्छे विचार वाला, सदाचारी, प्रजा का हित चाहने वाला होता था, वही प्रताप का मंत्री बन सकता था । प्रताप का विचार था कि जिनके जैसे साथी होते हैं, वैसे ही उनकी बुद्धि हो जाती है और वैसे ही काम करते हैं । अतएव साथी सदैव योग्य रखने चाहिये ।

प्रताप के मंत्रिमण्डल में न जाने कैसे चेतू नाम का एक सियार भी आ गया था । वास्तव में प्रताप उसे समझने में गलती कर गया था । वह बड़ा कपटी, स्वार्थी और धूर्त था, पर बाहर से बड़ा विनम्र और परोपकारी होने का ढोंग रचा करता था । यही कारण था कि प्रताप को धोखा हो गया था, पर सच्चाई भला कितने दिनों तक छिप सकती है । एक न एक दिन तो सामने आनी ही थी ।

कुछ शासक ऐसे होते हैं, जो दूसरों की बातों में आ जाते हैं । बिना परीक्षा किये ही उन पर विश्वास कर लेते हैं । वे अपनी आँख बन्द रखते हैं और कान खुले । परिणाम यह होता है कि वे सच्चाई नहीं देख पाते । ऐसे शासक अच्छे मित्रों से, सहायकों से दूर हो जाते हैं । उन्हें हर समय चापलूस, स्वार्थी और कामचोर घेरे रहते हैं और शासक को भी गुमराह कर देते हैं, पर प्रताप उनमें से न था । वह निष्पक्ष होकर अपने प्रत्येक मंत्री के गुण–दोषों का ध्यान रखता था ।

चेतू जानवरों की बुराई प्रताप से करता । प्रताप उसे सुन लेता था, बिना स्वयं परखे उस पर विश्वास नहीं करता था । चेतू सदैव प्रताप का विश्वासपात्र बनने का प्रयास करता । वह उसके आगे–पीछे घूमता, उसकी झूठी प्रशंसा करता, चापलूसी करता, पर प्रताप मन से इनसे प्रभावित नहीं होता था, मात्र सुन भर लेता था ।

प्रताप के दूसरे मंत्री और जासूस भी चेतू की निन्दा करते

थे । उन्होंने प्रताप को बताया था कि चेतू मंत्री होने का अनुचित लाभ उठाता है । वह प्रताप का नाम लेकर दूसरे जानवरों को डराता है, उनसे अपनी सेवा कराता है और चीज छीनता है, पर प्रताप ने उनकी एक बात पर भी पूरा-पूरा विश्वास न किया । उसने सोचा कि हो सकता है कि ये ही चेतू के विरुद्ध कोई षड्यंत्र रच रहे हों । बिना परखे हुए किसी को पहिचाना भी कैसे जा सकता है ? वे शासक को बिना स्वयं परखे दूसरों की बात पर पूरा विश्वास कर लेते हैं, सच्चाई जानने से वंचित ही रहते हैं ।

प्रताप ने चेतू पर कड़ी निगरानी रखनी शुरू कर दी । और कोई होता तो अपनी झूठी प्रशंसा से ही खुश हो जाता, कभी उस पर शंका न करता, पर वह प्रताप था योग्य और गुणी शासक, जो सुयोग्य सहायकों को ही चाहता था, चापलूसों को नहीं ।

एक दिन प्रताप घनी झाड़ियों में विश्राम कर रहा था । संयोगवश झाड़ियों के बाहर पगडण्डी पर चेतू सियार भी आ बैठा । प्रताप चेतू को अपनी जगह से अच्छी तरह देख-सुन सकता था, पर चेतू को प्रताप के वहाँ होने का कुछ पता न था । प्रताप ने देखा कि पगडण्डी पर एक साही चली आ रही है । उसके पास बहुत से फल, कुकुरमुत्ते और मांस था । उन्हें देखकर चेतू के मुँह में पानी भर आया । उसने साही का रास्ता रोक लिया और बोला-'ओह ! आजकल तुम बड़ी घमण्डी होती चली जा रही हो । राजा जी को कुछ उपहार भी नहीं देतीं । कई दिनों से उन्हें प्रणाम करने भी नहीं आयीं । वह तुमसे बहुत नाराज हैं ।'

यह सुनकर साही घबरा गयी । बोली-'ओह चेतू भाई ! मेरा बेटा बीमार है इसलिये नहीं आ पायी, पर प्रताप जी को तो यह बात पता है ।'

चेतू उसके और निकट पहुँच गया और आँखें नचाकर बोला-'तुम तो जानती ही हो बहिन ! राजा आखिर राजा ही होता है । वह किसी का भी कभी सगा नहीं होता । उसे तो जैसे भी हो प्रसन्न रखना ही चाहिये । नहीं तो न जाने कब, कैसे और कहाँ उसका गुस्सा सहना पड़े ।'

यह सुनकर साही बड़ी परेशान हुई । बोली–'तुम्हीं बताओ मैं क्या करूँ ? बच्चे की बीमारी से मेरा मन बड़ा परेशान है । कुछ सोच–समझ नहीं पा रही ।'

चेतू ने दिखाया मानो वह साही का कितना बड़ा हितैषी है । वह कहने लगा–'बहिन ! तुम्हारा दुःख देखकर मेरा कलेजा मुँह को आ रहा है । तुम्हारी सहायता करना मेरा कर्तव्य है । तुम ऐसा करो यह सामान मुझे दे जाओ । मैं तुम्हारी ओर से यह राजा प्रताप जी को दे दूँगा और उन्हें खुश करने की पूरी–पूरी कोशिश करूँगा ।'

साही ने निराश होकर अपना पूरा सामान चेतू को दे दिया । वह बोली–'मेरा बेटा चार दिन से भूखा है, बड़ी कठिनाई से मैं उसके लिये यह जुटा पायी थी ।'

'क्या किया जाय बहिन ! दुष्ट को शान्त तो करना ही होगा ।' चेतू मुँह लटकाकर बोला ।

साही के पीठ फिरते ही चेतू ने उसका माल गपागप खाया । जो उसे अच्छा न लगा, वह वहीं फेंक दिया । फिर हाथ–मुँह साफ करके वहाँ से उठ खड़ा हुआ ।

चेतू को पता था कि साही अगले दिन भी उसी रास्ते से आयेगी । अतएव दूसरे दिन वह फिर वहाँ जाकर बैठ गया । उसके वास्तविक रूप को जानने के लिये प्रताप भी आया था । क्योंकि जो हम कहा करते हैं, उससे हमारा सच्चा परिचय नहीं मिलता । जो हम करते हैं, उससे हमारा वास्तविक रूप प्रकट होता है ।

अगले दिन जैसे ही साही आयी, चेतू बोला–'बहिन ! राजा तुमसे बहुत अधिक नाराज हैं । तुम्हारा उपहार देकर कल मैंने जैसे–तैसे उनका गुस्सा कम किया था । अभी तो उन्हें कुछ और दिया जाय तब कहीं जाकर राजा का गुस्सा दूर होगा ।

साही अपने हाथ के सामान को कसकर पकड़ते हुए बोली–'आज तो मैं कुछ भी देने से रही । कल मेरा बच्चा सारी रात भूख से तड़फता रहा और मैं असहाय–सी चुपचाप देखती

रही । यह राजा का प्रजा के साथ अन्याय नहीं तो और क्या है ? अब और न सहूँगी मैं अत्याचार को ।'

चेतू बोला—'ठीक है तो फिर तुम्हीं जानो । उस आलसी राजा का गुस्सा जब सहना पड़ेगा, तब तुम्हें पता लगेगा ।'

साही चेतू की बात अनसुनी करके तेजी से आगे बढ़ गयी । चेतू अपने होठों पर जीभ ही फिराकर रह गया ।'

दूसरे दिन प्रताप का दरबार लगा हुआ था । सभी मंत्री बैठे—बैठे गम्भीर समस्याओं पर विचार कर रहे थे । चेतू बोला—'महाराज ! बड़े अफसोस की बात है कि जंगल के प्राणी आपकी निन्दा किया करते हैं । वे आपके शासन संचालन की भी आलोचना करते हैं ।'

प्रताप ने शान्त भाव से पूछा—'कौन है वह प्राणी ?'

चेतू झुककर बड़ी ही विनम्रता से बोला—'राजन् ! मैं बहुत समय से सुन रहा हूँ कि रानी साही और उसका परिवार आपकी बुराई करता है । यही नहीं रानी जंगल के दूसरे प्राणियों को भी आपके विरुद्ध भड़काती रहती है ।'

'इस अपराध का क्या दण्ड दिया जाना चाहिये ?' प्रताप ने पूछा ।

'रानी को प्राण दण्ड दिया जाना चाहिये ।' चेतू जल्दी से बोला ।

'नहीं, यह तो उचित नहीं है ।' सारे मंत्री एक साथ बोले ।

'तो फिर उसे परिवार सहित देश निकाला दे देना चाहिये ।' चेतू बोला ।

'ठीक है ।' प्रताप ने गर्दन हिलाकर कहा । फिर उसने अपने अंगरक्षक भालू को इशारा किया । भालू ने तुरन्त चेतू को बन्दी बना लिया । चेतू सकपका गया । वह कुछ समझ न पाया । जोर—जोर से चिल्लाने लगा ।

तब प्रताप ने अपने मंत्रियों को चेतू की सारी करतूत सुनाई । वे सब कह रहे थे—'महाराज ! हम तो इसकी करतूतें पहले से ही जानते थे ।'

तब तक भालू प्रताप की आज्ञा से रानी साही को भी वहीं बुला लाया था। आते ही रानी गिड़गिड़ाने लगी–'मेरा बेटा ठीक हो जायेगा तब मैं आपको ढेर सारे उपहार दूँगी, तब तक के लिये मुझे मॉफ कर दीजिये।

प्रताप की आज्ञा से धावक चीते ने रानी के सामने चेतू की सारी पोल खोल दी। साही बोली–'ओह! तभी तो मैं कहती थी कि हमारे राजा तो ऐसे नहीं हैं।'

तब तक प्रताप की आज्ञा से जंगल के सारे जानवर वहाँ इकट्ठे हो गये थे। प्रताप ने चेतू और उसके परिवार को तुरन्त अभयारण्य छोड़ने की आज्ञा दी। चेतू अपने कुकर्मों पर पछताता चुपचाप वहाँ से चल दिया।

सारे जानवर जोरों से घुस–पुस कर रहे थे। रानी जोर–जोर से कहने लगी–'मैं तो आपकी सदैव आभारी रहूँगी। सारे जानवरों की ओर से मैं आपके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ। आप जैसा सुयोग्य और विचारशील शासक पाना हमारे लिये गौरव की ही बात है। हमें विश्वास है कि हम सदैव आपसे न्याय ही पायेंगे।'

सभी जानवर प्रताप की जय–जयकार करने लगे। वे कह रहे थे–'राजा को ऐसा ही न्यायी होना चाहिये।'

उन सबकी बात सुनकर प्रताप ने मन ही मन में कहा–'भगवान करे मेरी यह सुबुद्धि सदैव बनी रहे। अच्छे काम करके मैं अपने साथियों से सदैव सम्मान पाता रहूँ।'

प्रताप ने सभी को धन्यवाद दिया। सभा समाप्त हो गयी। राजा की प्रशंसा करते हुए सभी अपने घर लौट गये।

सपने की सीख

केशव की शरारतों से पूरा घर परेशान था। उसकी शरारतों का ओर–छोर नहीं था। स्कूल से आया, बस्ता पटका, खाया–पिया और कर दिया अपनी शरारतों का दौर शुरू। कभी पीछे से आकर बहिन की चोटी खींचकर भाग जाता, तो कभी खाना पकाती

माँ की गैस ही चुपके से बन्द कर जाता । कभी चूहे की पूँछ में धागा बाँध कर उसे नचाता, तो कभी ततैया को पंखों से पकड़कर कुचल ही देता था । छोटे–मोटे जीव–जन्तुओं की तो केशव के घर में खैर ही न थी ।

केशव के माता–पिता उसकी इन आदतों से बड़े ही दुःखी थे । उसके पिताजी ने उसके लिये तरह–तरह के खिलौने लाकर रख दिये थे । पर दो–चार दिन तो केशव उनसे खेलता फिरता, फिर उन्हें एक कौने में पटक देता और उसकी शरारतें पुनः प्रारम्भ हो जातीं । धीरे–धीरे दूसरों को परेशान करने में, उन्हें सताने में उसे आनन्द आने लगा । छोटे–छोटे जीवों को तंग करके उन्हें मारकर वह खुश होता था । वह भूल जाता था कि इनमें भी मन और प्राण विद्यमान हैं । ये अबोध प्राणी बोल नहीं पाते तो क्या हुआ, इन्हें भी दुःख और कष्ट होता है ।

केशव की माँ यह देखकर बड़ी दुःखी होती । वह उसे समझाया करतीं–'देखो ! तुम बेकार के इन कामों में बहुत समय बर्बाद करते हो । उस समय में अच्छी किताबें पढ़ो, खेल खेलो और घर के छोटे–छोटे कामों में हमारी सहायता करो । समय का सदुपयोग करो, फिर सभी तुमसे खुश रहेंगे । बेकार के काम करने से, उनमें समय गँवाने से शक्ति क्षीण होती है । उससे न अपने को और न ही दूसरों को कोई लाभ मिल पाता है ।

माँ की इन बातों का प्रभाव दो–चार घण्टे केशव पर रहता, फिर वह जैसा का तैसा बन जाता । आखिर उसकी माँ ने ही बार–बार कहना छोड़ दिया । पर हाँ, जब वह छोटे जीवों को सताता तो उनका खून खौल उठता और वे कभी–कभी तो गुस्से में आकर केशव की पिटाई भी कर देतीं । वह इतना ढीठ बन गया था कि उस पर कोई भी असर न होता ।

एक दिन घर के पिछवाड़े नीम के पेड़ पर बने मक्खियों के छत्ते को देखकर केशव ललचा उठा । उसने सोचा कि मधुमक्खियों को यहाँ से भगा दूँगा तो खूब सारा शहद खाने के लिये मिलेगा । दोपहर में जब माँ सो रही थी तो वह दबे पैरों वहाँ गया । पेड़

के नीचे घास-फूस इकट्ठा करके उसने धुँआ कर दिया । धुँए के कारण मधुमक्खी छत्ते से निकल-निकल कर उड़ने लगीं । जब वहाँ मक्खियाँ न रहीं तो केशव अपने शरीर को चारों ओर से ढक कर पेड़ पर चढ़ा और छत्ता तोड़ने लगा । अभी उसने तोड़ने के लिये हाथ बढ़ाया ही था कि हवा के तेज झोंके से उसके मुँह का कपड़ा उघड़ गया । छत्ते में रहने वाले बच्चों के मोह से उड़ रही मक्खियों का झुण्ड केशव के मुँह पर टूट पड़ा । केशव इस आकस्मिक हमले से हड़बड़ा उठा और उसका पैर फिसल गया । धड़ाम से वह पेड़ से गिर पड़ा । अब मधुमक्खियों को भी मौका मिल गया वे उसके शरीर से जगह-जगह चिपककर उसे काटने लगीं । जैसे-तैसे केशव वहाँ से जान बचाकर भागा ।

घर के अन्दर पहुँचते-पहुँचते अनेकों जगह मधुमक्खियों ने उसे काट खाया था । उसके मुँह, हाथ-पैर सभी सूज रहे थे । दर्द से वह बेचैन हो रहा था । माँ को वह जगाये भी तो कैसे ? उसकी हिम्मत भी नहीं हो रही थी । जी कड़ा करके खुद दवा की आलमारी के पास गया और जगह-जगह जहाँ मधुमक्खियों के डंक लग गये थे वहाँ दवा लगाई ।

एक घण्टे की पीड़ा के बाद मधुमक्खियों के काटने की जलन तो शान्त हो गयी, केशव का बायाँ हाथ दर्द कर रहा था । वह हथेली के ऊपर से न हिल रहा था । उसके हिलने पर वह दर्द से कराह उठता था । आखिर जब उससे दर्द न सहा गया तो माँ के पास गया ।

'आज क्या शैतानी की है तुमने ?' माँ ने पूछा ।

'कुछ नहीं माँ मैं तो चुपचाप कमरे में लेटा था ।' केशव ने अनजान-सा बन कर झूठ बोलना चाहा ।

'असम्भव, बिलकुल असम्भव है यह । या तो सच-सच चुपचाप से बता, नहीं तो भागो यहाँ से । भुगतते रहो दर्द ।' उसे तीखी नजरों से देखते हुए कठोर स्वर में माँ ने कहा ।

माँ की डाँट से केशव रो पड़ा । वास्तव में दर्द भी अब तेज होता जा रहा था । उसने रोते-रोते माँ को सारी बात

सच-सच बता दी । माँ ने उसका हाथ छुआ तो केशव चीख पड़ा । वे कहने लगीं लगता है कि हड्डी टूट गयी है ।

हड्डी टूटने का नाम सुनकर तो केशव जोर-जोर से रोने लगा । माँ बोलीं दूसरों को सताने वाला कभी न कभी दण्ड पाता ही है । औरों का बुरा सोचने वाला, बुरा करने वाला, कभी सुख पा ही नहीं सकता । जितने जीवों को तुमने सताया है । सब तुमसे बदला तो लेंगे ही ।

शाम को पिताजी केशव को डाक्टर के यहाँ ले गये तो उन्होंने बताया कि उसकी हड्डी टूट गयी है । डाक्टर ने डेढ़ महीने के लिये केशव के हाथ पर प्लास्टर चढ़ा दिया । गले में डाली गयी पट्टी में हाथ लटकाकर जब केशव घर आया, तो वह रुँआसा हो रहा था ।

माँ अभी गुस्से में थी, पिताजी भी कह रहे थे-'जो जैसा करेगा वह वैसा ही फल पायेगा । बुरा करने वाले को रोग, शोक और संकट सहने ही पड़ेंगे ।'

घर में कोई ऐसा न था, जिसने केशव से सहानुभूति दिखाई हो । सभी उसका तिरस्कार कर रहे थे । केशव ने इतना अपमान कभी नहीं सहा था । वह भूखा-प्यासा जाकर सो गया । सोच रहा था कि माँ आकर उठायेंगी । कुछ देर तक वह इन्तजार करता रहा, पर माँ और पिताजी के शब्द उसके कानों में गूँज रहे थे । उनकी बातें सोचते-सोचते ही उसकी आँख लग गयी ।

सपने में केशव ने देखा कि ढेरों मधुमक्खियाँ, चूहे-ततैया, जगह-जगह उसके शरीर से चिपक गये हैं । वे उसे खूब जोर-जोर से काट रहे हैं--'दुष्ट और सतायेगा हमें । ले यही फल मिलेगा तुझे । अब स्वयं सहकर पता लग रहा है न तुम्हें कि दूसरों को भी कष्ट होता है । मूर्ख अभी भी सुधर जा । वायदा कर कि किसी को नहीं सतायेगा । नहीं तो काटकर जान ले लेंगे हम तेरी ।'

'अब कभी नहीं सताऊँगा । कभी नहीं सताऊँगा । 'छोड़ दो मुझे ।' केशव चीखा और उसकी आँख खुल गयी ।

केशव ने पाया कि सिरहाने बैठी उसकी माँ पूछ रही हैं—'क्या बात है केशव ?'

सहम कर केशव माँ की गोद में चिपकते हुए बोला—'माँ मैं अब कभी किसी को तंग नहीं करूँगा ।'

'तब तो तुम हमारे राजा बेटा बन जाओगे । फिर सभी तुम्हें बहुत प्यार करेंगे ।' कहकर माँ ने केशव को हृदय से लगा लिया ।

अब केशव सचमुच बड़ा अच्छा लड़का बन गया है । सभी को तंग करना जीवों को सताना उसने छोड़ दिया है । उसके पिताजी ने दो नन्हें खरगोश उसके लिये ला दिये हैं, जिन्हें वह बड़े प्यार से रखता है । अब तो केशव छोटे-छोटे जीव-जन्तुओं को किसी दूसरे के द्वारा भी सताया जाता देखता, तो उनसे भी कहता—'भाई ! इन बेचारों को दुःख देने में हमारा गौरव नहीं है । अगर कुछ कर सकते हैं, तो हम सब इनकी सुरक्षा और सहायता ही करें, तभी ये हमें कुछ दुआयें देंगे ।'

केशव की माँ अक्सर कहा करती हैं कि व्यवहार के इस परिवर्तन का कारण उसकी हड्डी टूटना है । वह यह सुनकर मन ही मन मुस्करा उठता है । अपने आप से कहने लगता है कि यह सब सपने की सीख का परिणाम है । ◎

मित्रता का अन्त

अन्ना चुहिया बड़ी आलसी थी । कुछ काम-काज न करती तो न सही, पर जुबान की भी बड़ी तीखी थी । वह इतनी कड़वी बातें करती कि सभी का जी उससे भर गया । एक दिन उसकी किसी बात से नाराज होकर सभी चूहे-चूहियों ने उसे बिल से बाहर निकाल दिया । बिना सोचे-समझे बोलने वाला, कटु बोलने वाला दूसरों से तिरस्कार ही पाता है ।

अन्ना अकेली रहने के लिये चल पड़ी । रास्ते में उसे

सुन्दर-सा हरा-भरा बगीचा दीखा । अन्ना को रहने के लिये यह स्थान बहुत ही पसन्द आया । वह उस बगीचे में घुस गयी । वहाँ अन्ना ने बिल बना लिया । खाने-पीने की चीजों की कमी न थी । बगीचे में बहुत फल यों ही हवा के झोकों से गिर जाया करते थे । उन्हें अन्ना बड़े मजे से खाया करती । जब कभी फल खाने से मन भर जाया करता तो बगीचे के पास ही भोला की रसोई में घुस जाती । वहाँ अनेक प्रकार के पकवान खाती, पर खाना ढूँढ़ने के लिये अन्ना को अब मेहनत तो करनी ही पड़ती थी । उसकी आदत तो बिना परिश्रम किये खाने की पड़ गयी थी । इसलिये अन्ना को यह अच्छा न लगता था, पर मजबूर थी । पेट में जब जोरों की भूख लगती तो खाना ढूँढ़ने जाना पड़ता ।

अन्ना अकेली-अकेली बड़ी उदास रहने लगी । उसने सोचा कोई मित्र बनाया जाय । अकेलापन भी दूर होगा और समय पर कुछ सहायता भी मिलेगी ।

एक दिन अन्ना ने एक बड़ी चींटी को देखा । वह कचनार के पेड़ के नीचे लेटी थी । चींटी ठण्डी-ठण्डी हवा का आनन्द ले रही थी । उसके मुख पर प्रसन्नता और संतोष झलक रहा था, उसे देखकर अन्ना बड़ी प्रभावित हुई । वह उसके पास गयी और बोली-'प्यारी चींटी ! मैं तुमको अपना मित्र बनाना चाहती हूँ । क्या तुम बनना चाहोगी ?'

चींटी उसकी बात सुनकर बैठ गयी । वह विनम्रता से बोली-'देखो बहिन ! मित्र तो बहुत सोच-समझकर ही बनाना चाहिये । जो समान स्वभाव के, समान गुणों के और बफादार होते हैं, उन्हीं की मित्रता सफल होती है ।'

'पर बहिन मैं इस उद्यान में अकेली हूँ । मेरा कोई साथी नहीं है, यदि तुम मेरा प्रस्ताव मान लेती हो, तो मुझ पर बहुत बड़ा उपकार होगा ।' अन्ना ने प्रार्थना की ।

चींटी कुछ सोचते हुए बोली-'तुम्हारी बात सुनकर मेरा मन दया से भर गया है । चलो, मैं तुम्हें मित्र बनाना स्वीकार करती हूँ, पर ध्यान रखना ! सच्चे मित्र की पहिचान है-अपने मित्र का सदैव

सदैव हित सोचना, उसे सही सलाह देना और समय पर उसकी सहायता करना ।'

'तुम देखना कि तुम्हारी कितनी अच्छी मित्र सिद्ध होती हूँ ।' मुँह फिराकर अन्ना बोली ।

'मेरा नाम राज है । इसी कचनार के पेड़ की जड़ में ही मेरा घर है ।' चींटी ने अपने हाथ से इशारा करते हुए कहा ।

जल्दी ही अन्ना और राज की मित्रता पक्की हो गयी । अन्ना बड़ी खुश थी, क्योंकि उसका अकेलापन अब दूर हो गया था । राज के साथ उसका मन खूब ही लगा रहता था । वे दोनों साथ–साथ घूमती थीं ।

गर्मी और बरसात इस प्रकार आराम से कट गये । बरसात के एक दिन राज बोली–'अन्ना बहिन ! कल से अब मैं तुम्हारे साथ अधिक घूम न पाऊँगी ।'

अन्ना को लगा कि कहीं किसी बात पर राज नाराज तो नहीं हो गयी है । उसने घबराते हुए पूछा–'क्यों ?'

'इसलिये कि अब जाड़े आने वाले हैं । जाड़ों से पहले मुझे खाने–पीने का सामान इकट्ठा करना है ।' राज बोली ।

अन्ना तुनक कर बोली–'ओह ! तो इसमें तुम्हें परेशान होने की क्या बात है ? धीरे–धीरे जोड़ती रहना ।

राज बोली––'नहीं ! मेरी प्यारी बहिन यह संभव नहीं है । मुझे तो जाड़े आने से पहले ही बहुत काम करना है । अब कल से तुम्हारे साथ बिल्कुल भी घूम नहीं पाऊँगी । गर्मियाँ आने तक के लिये विदा ।'

यह सुनकर अन्ना का मन बड़ा दुःखी हुआ । वह सोचने लगी कि जैसे–तैसे तो यह मिली है । अब इसका भी साथ छूटा जा रहा है । वह कुछ देर तक उदास–सी बैठी रही । फिर सहसा ही उसे एक उपाय सूझा । खुशी से चमकते हुए अन्ना कहने लगी–'सुनो राज ! तुम्हारी समस्या मैंने हल कर दी । खाने–पीने का सामान इकट्ठा करने में भी मैं तुम्हारी सहायता करूँगी । तुम तो बहुत छोटी–सी हो । एक बार में थोड़ा–सा ही ला पाओगी ।

तुम अपने साथ मुझे ले चलना, मैं एक बार में बहुत-सी चीज ले आऊँगी । इस प्रकार जल्दी-जल्दी तुम्हारा राशन पूरा हो जायेगा । फिर हम आराम से अब की तरह घूमा करेंगे ।'

दूसरे दिन अन्ना ने राज को बहुत मना किया कि वह स्वयं अपना काम करेगी, पर अन्ना ने एक न सुनी । वह बोली-'सुनो ! ऐसा करो कि तुम मुझे यह बताती जाना कि कौन-सी चीज कहाँ रखी है ? क्या लेकर आना है ? तुम्हारी सूँघने की शक्ति बहुत तेज है । अतएव तुम यह काम आसानी से कर पाओगी । तुम मेरी पीठ पर चढ़ जाओ, दोनों साथ-साथ चलती हैं ।'

राज झिझक रही थी, पर अन्ना ने बहुत आग्रह किया । आखिर में राज उसकी पीठ पर चढ़कर बैठ गयी । दोनों सहेलियाँ अन्न की खोज के अभियान में जुट गयीं ।

दो-तीन दिन तक यही क्रम चलता रहा । वे अक्सर ही भोला की रसोई में घुस जातीं । कभी कुछ उठा लातीं, तो कभी कुछ । राज बड़ी खुश थी, वह मन में सोचती थी कि देखो समर्थ से मित्रता करना कितना सुख देता है ? मैं अब तक सोचा करती थी कि अन्ना आलसी है, लापरवाह है । अब तो हर साल यह मेरी ऐसी ही सहायता करेगी । आह ! दूसरी चींटियाँ महीनों काम में जुटीं रहेंगी और मैं झटपट अपना काम पूरा कर मौज मनाऊँगी ।

पर राज का यह सोचना सच नहीं हुआ । चौथे दिन ही एक दुर्घटना घट गयी । हुआ यह कि भोला की माँ रोज-रोज अन्ना के रसोई में घुसने से तंग आ गयी । उसने एक चूहेदान में रोटी का एक बड़ा-सा टुकड़ा लगाकर रख दिया । अन्ना जैसे ही रोटी लेने उसमें घुसी, वह खट से बन्द हो गया । अब तो अन्ना और राज दोनों ही चूहेदान में बन्द हो गयीं अन्ना ने बहुतेरे हाथ-पैर मारे पर वह चूहेदान का दरवाजा खोलने में सफल न हो सकी । दो घण्टे के लगातार प्रयास के बाद अन्ना थककर बैठ गयी । उसके मुँह से खून निकलने लगा था और हाथ-पैर दर्द करने लगे थे ।

'राज के कारण ही मुझे इस प्रकार बन्द होना पड़ा था । अब तो निश्चित ही मेरे प्राण संकट में हैं ।' ऐसा सोचकर अन्ना को राज पर बड़ा गुस्सा आया । वह पास ही चुपचाप उदास बैठी राज पर बड़ी नाराज हो रही थी । राज बोली–'नाराज क्यों होती हो ? मैंने तो खुद ही कहा था कि मैं अपना काम खुद कर लूँगी । तुम ही नहीं मानी थीं, पर अब गुस्सा करने से लाभ ही क्या है ? तुम्हारे छूटने का कोई उपाय सोचती हूँ ।'

'बड़ी आयी तू उपाय सोचने वाली ।' तू क्षुद्र प्राणी भला मुझे कैसे छुड़ायेगी ? अब तू ज्यादा बक–बक न कर । मेरी आँखों के आगे से दूर हो जा, आँखें लाल–लाल करके अन्ना बोली । साथ ही उसने बहुत जोर से अपनी पूँछ घुमाकर राज के मारी और उसे दूर धकेल दिया ।'

राज को बड़ी चोट लगी । उसका पैर तुरन्त ही टूट कर अलग हो गया । दर्द से कराह उठी वह, उसका मन भी बड़ा दुःखी हो रहा था । लँगड़ाती हुई वह चूहेदान के बाहर निकली तभी उसने देखा की भोला की माँ चूहेदान उठा रही है । 'जरूर अब वह अन्ना को मारेगी ।' राज ने मन में सोचा । उसने जोर से भोला की माँ के पैर पर काट खाया । अचानक ही भोला की माँ के हाथ से चूहेदान छूट पड़ा । छूटते ही वह खुल गया,खुलते ही अन्ना उसमें निकल भागी । उसने पीछे मुड़कर एक बार भी राज की ओर न देखा ।

राज जैसे–तैसे लँगड़ाते हुए अपने बिल में पहुँची । उसकी यह दुर्दशा देखकर अनेकों चींटियाँ दौड़ी चली आयीं । उन्होंने अनेकों उपचार किये, तब कहीं जाकर पैर का दर्द कुछ कम हुआ ।

राज अभी भी लँगड़ाती हुई चलती है । वह ठीक से काम नहीं कर पाती, पर उसके बिल की रानी चींटी ने कह दिया है–'आसानी से जितना काम कर सकती हो, करो । आज यदि तुम काम नहीं कर पा रही हो, तो क्या हम तुम्हें निकाल देंगे ? नहीं कदापि नहीं । तुम अधिकारपूर्वक इस बिल में रहो ।'

और आज भी राज सभी चींटियों के बीच सम्मानपूर्वक रहती

है । पर हाँ, वह लँगड़ी कैसे हुई ? इसका रहस्य केवल वही जानती है । उसे अन्ना से दोस्ती की बात किसी को बताते भी शर्म आती है । वह प्रायः सभी को यों समझाया करती है–'हर किसी को मित्र नहीं बनाना चाहिये । मित्रता बड़ी सोच–समझकर करनी चाहिये । अन्त तक फिर उसका पालन करना चाहिये । जीवन में कोई सच्चा मित्र न बन पाये, यह उतना बुरा नहीं है । इससे बुरा तो यह है कि हम बिना परखे किसी अयोग्य और दुष्ट से मित्रता कर लें । क्योंकि मित्र शुरू में तो बड़ा मीठा व्यवहार करते हैं, पर अन्त में पछतावा ही पछतावा शेष रहता है । इसलिये खूब सोच–समझकर मित्र बनाने चाहिये । ◎

कहानी एक चित्र की

'देखो ! शशांक यह चित्र कैसा है ?' राकेश ने एक चित्र दिखाते हुए अपने मित्र से पूछा ।

'सुन्दर, बहुत ही सुन्दर ।' शशांक उसे देखकर उछल पड़ा । फिर पूछने लगा––'पर दोस्त ! तुमने इसे कैसे बनाया है ?'

'कबूतर, चिड़ियों के झड़े हुए पंखों और जली हुई तीलियों आदि बेकार की चीजों से बना है । मेरी माँ ने इन बेकार की वस्तुओं का उपयोग करना सिखाया है ।' राकेश ने उत्तर दिया ।

शशांक उस चित्र को दो पल ठगा–सा देखता रहा । फिर मन ही मन उसने सोचा कि वह उससे भी अच्छा सुन्दर चित्र बनाकर राकेश को दिखायेगा ।

कई दिनों तक शशांक सोचता रहा । फिर सहसा ही उसे एक विचार आया कि यदि पूरा चित्र तितलियों के पंखों से बनाया जाय तो वह बड़ा ही सुन्दर लगेगा ।

फिर क्या था ? शशांक अपने विचार को पूरा करने में जुट गया । उसके घर के पास ही उसके मित्र का एक बहुत बड़ा बाग था । वह प्रतिदिन उसमें जाने लगा ।

पर तितलियों के झड़े हुए पंख खोजने में शशांक को बड़ी ही परेशानी हुई । यों उस बाग में रंग-बिरंगी, मनभावनी अनेकों तितलियाँ उड़ती थीं । एक फूल से दूसरे फूल पर मँडराती थीं, पर वहाँ मरी हुई तितलियों के पंख बहुत ही कम मिल पाते थे ।

शरारती शशांक ने अब दूसरा ही उपाय निकाल लिया । वह फूलों का रस पीती तितलियों को धागा फँसाकर पकड़ने लगा । धागे में फँस कर तितलियाँ छटपटातीं, पर शशांक उन्हें छोड़ने का नाम भी न लेता । उल्टे उनकी छटपटाहट देखकर प्रसन्न ही होता ।

बाग के रखवालों को शशांक की यह आदत तनिक भी अच्छी नहीं लगती । वे बार-बार कहते-'देखो शशांक ! किसी भी जीव को कष्ट देना अच्छी बात नहीं । जो आत्मा हममें है, वही सब में है । जैसे हमें शरीर से कष्ट होता है, वैसे ही छोटे-छोटे जीव-जन्तुओं को भी होता है । हम कुछ कर पायें तो उनकी सेवा-सहायता ही करें । उन्हें दुःख देना हमारी मूर्खता है ।'

पर शशांक था कि उस पर इन बातों का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता था । वह एक कान से सुनता था और दूसरे कान से निकाल देता था ।

एक दिन शशांक आम के पेड़ की छाया में बैठकर चित्र बना रहा था । तभी चुपचाप उसके पिता के मित्र और बाग के मालिक उसके पीछे आकर खड़े हो गये । बाग के रखवाले से उन्हें सारी बात पहले से ही पता लग चुकी थी । उन्होंने पीछे से आकर शशांक का चित्र छीन लिया और उसके देखते-देखते टुकड़े-टुकड़े करके उसे हवा में उड़ा दिया ।

यह देखकर शशांक स्तब्ध रह गया । तभी उसने सुना कड़कती आवाज में, उसके मित्र के पिताजी कह रहे थे-'समझ में नहीं आता कि आखिर क्या सोचकर तुमने तितलियों को मारना शुरू किया ? क्यों तुम्हें नाचती, बलखाती, जीती-जागती तितलियाँ नहीं भायीं और तुम उनके प्राण लेने के लिये उतारू हो गये । तुम मनुष्य नहीं राक्षस हो ।'

राक्षस ! राक्षस कैसे चाचाजी ?' शशांक के मुँह से बस इतना ही निकला ।

'जो अपने थोड़े से सुख के लिये, थोड़े से स्वार्थ के लिये, क्षणिक प्रसन्नता के लिये दूसरों को सताये और उनके प्राणों को भी ले ले, वह राक्षस नहीं तो और क्या है ? मनुष्य कहलाने का अधिकारी तो वही होता है, जो औरों के लिये हँसते-हँसते अपने सुखों को न्यौछावर कर देता है ।' चाचाजी गम्भीर होकर कह रहे थे ।

शशांक चुपचाप सिर झुकाये सुनता रहा ।

चाचाजी फिर बोले-'सोचो तो जरा ! जितनी तितलियाँ तुमने मारी हैं, सारी की सारी तुम्हारे शरीर से आकर चिपक जायें, मुँह पर फड़फड़ाने लगें, तुमसे बदला लेने लगें, तो कैसा लगेगा तुम्हें ? याद रखो किसी को सताकर हम कभी सुखी नहीं रह सकते । कभी न कभी हमको इसका दण्ड मिलता ही है । ईश्वर के यहाँ देर हो सकती है, पर अन्धेर नहीं ।'

अपराधी-सा शशांक कह रहा था-'मैंने सोचा था चाचाजी कि एक सुन्दर-सा चित्र बन जायेगा ।'

'बेटे ! तुम्हें चित्र बनाना है, तो रंग-बिरंगे फूलों की पंखुड़ियों से, तरह-तरह के पत्तों से बनाओ । वह सौन्दर्य, जिसके मूल में प्राणों की बलि हो उसकी प्रशंसा नहीं की जा सकती । उसकी तो जितनी उपेक्षा की जाये, जितनी निन्दा की जाये-वह बहुत कम है ।' चाचाजी ने कहा ।

'आगे ऐसा नहीं करूँगा ।' यह कहकर शशांक चुपचाप वहाँ से चल दिया । अपनी गलती उसकी समझ में आ रही थी । रास्ते भर वह सोचता जा रहा था कि चाचाजी ठीक ही कह रहे थे कि अपने स्वार्थ के लिये दूसरों का अहित करना मनुष्यता नहीं है ।



पोल खुल गयी

एक थे बगुला भगत । जब वह बुड्ढे हो गये तो उनके खाने की एक बड़ी समस्या हो गयी । बुढ़ापे के कारण शरीर भी अशक्त–सा हो गया था । अतएव शिकार करने में उन्हें बड़ी परेशानी होती थी । भरपेट खाना न मिल पाने के कारण वे धीरे–धीरे दुबले हो गये ।

'ऐसे कब तक चलेगा ?' एक दिन उन्होंने सोचा और वे कोई तरकीब सोचने लगे । वे कुछ देर सोचते रहे–सोचते रहे, फिर सहसा ही उछल पड़े ।

दूसरे ही दिन से बगुला भगत ने अपनी योजना के अनुसार ही काम करना शुरू कर दिया । अपने दो–चार साथियों को लेकर वे गंगा की ओर चल पड़े ।

गंगा के तट पर बस्ती के किनारे बगुला भगत ने डेरा डाला । वहाँ वे गंगा में एक पैर से खड़े होकर 'राम–राम' का जप करने लगे । उनके साथी जगह–जगह जाकर प्रचार करते कि बगुला भगत पहुँचे हुए सन्त हैं, तपस्वी हैं । गंगा के किनारे रहने वाले पक्षियों से बार–बार यही बात कहते । पक्षी भी बगुला भगत को सदैव साधना में लगा हुआ देखते । फल यह हुआ कि धीरे–धीरे वे सभी उन्हें सन्त और तपस्वी मानने लगे और उनके भक्त बन गये । अब बगुला 'भगतजी' के नाम से प्रसिद्ध हो गये ।

एक दिन जब भगतजी के दर्शन के लिये बहुत सारे जीव–जन्तु एकत्रित थे । वे बोले–'भाइयो ! मेरी साधना सफल हो चुकी है । भगवान् ने मुझे दर्शन दिया है । उन्होंने आदेश दिया है कि मेरी बनायी हुई सृष्टि की सेवा ही सबसे बड़ी साधना है । अतएव यदि तुम मेरा आशीर्वाद चाहते हो, तो दूसरों के उत्थान में जुट जाओ ।'

'धन्य हैं आप ! धन्य हैं आप !' सभी के मुँह से निकला ।

भगत जी आगे फिर कहने लगे–' मैं सोचता हूँ कि बच्चों की भावी पीढ़ी का निर्माण बहुत बड़ा काम है । मैं बच्चों का एक बड़ा विद्यालय खोलना चाहता हूँ । मैं उन्हें अच्छी शिक्षा दूँगा । अपने समान ज्ञानी बनाऊँगा, चरित्रवान् बनाऊँगा और बहुत ऊँचा उठाऊँगा । आप सभी अपने बच्चों को विद्यालय भेजें ।'

फिर क्या था । दूसरे दिन से ही मुर्गा, तोता, कोयल, चिड़िया, गिलहरी, सारस, मोर आदि सभी ने अपने-अपने बच्चे वहाँ भेजने शुरू कर दिये ।

स्कूल चलाने से बगुला भगत को कई फायदे हुए । एक तो यही कि बच्चे अपने घरों से खाने-पीने का कुछ न कुछ सामान लेकर आते थे । उनके माता-पिता श्रद्धावश कुछ न कुछ भेजते ही रहते थे । बच्चों से दूसरा लाभ यह भी था कि भगतजी उनसे अपनी खूब सेवा कराया करते थे । कभी शान्ता कोयल से अपने पैर दबवाते तो कभी श्वेता गिलहरी से अपनी पीठ । सुशील सारस उनके घर का भी बहुतेरा काम कर दिया करता था ।

गुरु महाराज की पाठशाला के दो बच्चे शुचि गिलहरी और अमित सारस बड़े ही शरारती थे । वह पढ़ने में बहुत तेज थे । एक बार बतायी हुई बात को ही अच्छी तरह समझ जाते थे । उन्हें भगतजी की यह बात बड़ी बुरी लगती थी कि वे बच्चों को कुछ और सिखलाते हैं और खुद उसका उल्टा काम करते हैं । बच्चों से तो यह कहा करते हैं कि जीवों की हत्या बहुत बुरी बात है । इससे हिंसा होती है, पाप चढ़ता है । जैसी जान दूसरों में है, वैसी ही हम सब में है । अतएव हम किसी को भी मन से दुःख न पहुँचायें, पर शुचि और अमित ने अनेकों बार देखा था कि भगतजी गंगा के तट पर पूजा करते-करते सबकी आँख बचाकर चुपके से मछली गप कर जाते हैं । पहली बार तो उन्हें अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ था । वह तो उन्हें बड़ा ही सज्जन

समझते थे, पर बार–बार छिपकर देखने पर उन्होंने यही पाया तो फिर अपनी आँखों पर विश्वास करना ही पड़ा । उस दिन से उन्होंने उनका नाम भी भगत घण्टाल ही रख दिया था ।

अमित और शुचि ने कई बार कहा भी–'गुरुजी ! जैसा आचरण आप हमें करने को कहते हैं, वैसा ही आप स्वयं तो नहीं करते हैं ।'

'पर मैं तो बड़ा हूँ । तुम अभी छोटे हो । अपने आपको नियंत्रित रखने की तुम्हें ज्यादा जरूरत है ।' गुरुजी अपनी लम्बी–सी गरदन हिलाकर कहते ।

एक दिन शुचि से न रहा गया । वह कह ही बैठी–'गुरुजी ! आप जो कुछ बच्चों को सिखलाते हैं, बड़े भी यदि वैसा ही करने लगें, तो यह पृथ्वी स्वर्ग बन जाये ।'

'अरे ! कल की बच्ची मुझे उपदेश देने चली है ।' गुस्से में अपना डण्डा फटकारते हुए भगतजी बोले ।

अमित और शुचि ने सलाह की कि गुरुजी को मछली खाने की आदत वे छुड़वा कर ही रहेंगे । यदि वे माँस खाते हैं, तो फिर प्राणियों की हिंसा छोड़ दी है–ऐसा कहकर ढोंगे क्यों रचाते हैं ? जैसे अन्दर से हैं, वैसे ही बाहर से रहें । जो अन्दर से कुछ और ही सोचता है, बाहर से कुछ और करता है, तो उसके जैसा पापी और नीच दूसरा नहीं ।

अमित और शुचि ने एक योजना बनाई । वे सभी बच्चों के घर गये । सभी के माता–पिता से बोले–'भगतजी एक बहुत बड़ी साधना करने जा रहे हैं । उसे देखने के लिये उन्होंने आपको बुलाया है । कृपया कल ब्रह्म मुहूर्त में गंगा किनारे, बेंत की झाड़ियों के पीछे आप सभी इकट्ठे हो जायें । वहाँ किसी तरह का शोर–शराबा न करें, नहीं तो साधना में बाधा पड़ेगी ।'

कोयल, तोता, मुर्गा, चिड़िया, गिलहरी, सारस आदि सभी के घर–घर घूम–घूमकर उन्होंने यह संदेश दे दिया ।

और दूसरे दिन गंगा के किनारे बेंत की घनी झाड़ियों के पीछे सभी बच्चों के माता-पिता उपस्थित थे । भगत जी की साधना देखने के लिये कोयल, तोता, चिड़िया, मोर आदि सभी पंक्ति बनाकर मौन होकर चुपचाप बैठे थे ।

भगतजी को इस बात का तनिक भी पता न था । झाड़ियों के पीछे छिपे अनेकों अभिभावकों को वे हल्के अन्धेरे में देख भी न पाये । रोज की ही भाँति पूजा का बहाना करते-करते उन्होंने बीच-बीच में खूब गपागप मछलियाँ खायीं । यह देखकर तो सभी अभिभावकों में खलबली मच गयी । वे सभी उनकी आलोचना करने लगे । भगतजी ने आँखें उठायीं । सामने से बच्चों के अभिभावकों को आता देखकर तुरन्त उन्होंने पैंतरा बदला । 'राम-राम' कहते वे अपने शिष्यों को आशीर्वाद देने के लिये आगे बढ़े ।

सबसे आगे कमल सारस था । गुस्से में भरकर लम्बी गरदन हिलाता वह बोला--'नहीं चाहिये हमें तुम्हारा आशीर्वाद ।'

'जान लिया आज तुम्हारी सच्चाई को । तुम वैसे हो नहीं जैसा होने का ढोंग रचते हो ।' कलिया कोयल चोंच फाड़कर कह रही थी ।

'सच ही है कि बाहर से सन्त बन जाने से हमेशा के लिये कोई वैसा नहीं बन जाता है । सद्गुणों का निरन्तर अभ्यास करना होता है । ऐसा न होने पर तो सज्जन भी न जाने कब धीरे-धीरे दुर्गुण अपना लेते हैं । आपके उदाहरण से स्पष्ट ही हो जाता है......।' मीना गिलहरी पूँछ फटकार कर, पंजों के बल बैठकर बोली ।

'हम भी कितने मूर्ख थे जो आपकी प्रसिद्धि सुनकर ही विश्वास करने लगे । कभी हमने आँखें खोलकर आपको जाँचने परखने की कोशिश नहीं की । सच ही है कि जो अपनी बुद्धि से काम नहीं करता, दूसरों की देखी-सुनी बात पर विश्वास करता है, वह हमेशा धोखे में ही रहता है ।' हरियल तोता बोला ।

'ध्यान रखो ! पोल कभी न कभी तो खुलती ही है । अच्छा यही है कि जैसे हम अन्दर से हैं, बाहर से भी अपने आपको वैसा ही दिखलायें ।' बगुला भगत से यह कहकर बुजुर्ग कछुआ ने सभी को शान्त किया । जैसे-तैसे वे वहाँ एकत्रित सभी जानवरों-पक्षियों को सभी बच्चों सहित घर की ओर ले चले, नहीं तो सब के सब भगतजी को सबक सिखाने के लिये उतारू थे ।

दूसरे दिन कोयल, तोता, चिड़िया, सारस आदि सभी ने अपने-अपने बच्चों को स्कूल भेजना बन्द कर दिया । उनके बच्चे तो पहले भी भगत की शिकायत करते थे, पर उसे तब वे बच्चों की मूर्खता समझते थे । अब उनकी बात पर विश्वास करना ही पड़ा ।

भगत गुरु का सारे समाज में अपमान भी हुआ । बालवाड़ी भी बन्द हुई, पुजापा चढ़ना भी खत्म हुआ सो अलग । उनकी पोल खुल जाने पर मछलियाँ भी अब दूसरी जगह चली गयी हैं । भगतजी अब गंगा के सुनसान तट पर अकेले उदास बैठे रहते हैं । पेट भर खाना भी उन्हें मुश्किल से ही मिल पाता है । सच ही है कि ढोंगी अन्त में दुःख ही पाता है ।

ज्योतिषी सियार की करामात

एक बार भासुरक सिंह अपने राजदरबार में बैठा था । सभा जुड़ी हुई थी, बानर, हाथी, चीता आदि सभी सभासद अपने-अपने आसनों पर बैठे थे । तभी द्वारपाल ने प्रवेश किया और कहा-'महाराज ! दूर देश से कोई जानवर आपके दर्शन करने आया है ।'

सिंह ने उसे अन्दर बुलाने की आज्ञा दे दी । द्वारपाल रीछ उसे लेकर अन्दर आया । आगन्तुक एक सियार था । एक गेरुए रंग के वस्त्र पहिने था । उसके माथे पर लम्बा-सा तिलक लगा

हुआ था । गले में बड़े–बड़े काले दानों की माला पड़ी हुई थी । वेशभूषा से वह पण्डित लग रहा था ।

'कहिये ! आपका आगमन कहाँ से हुआ है ? आपका शुभ नाम क्या है ? आप क्या कार्य करते हैं ?' भासुरक ने उसके वेष से प्रभावित होते हुए और आसन देते हुए कहा ।

'महाराज ! मेरा नाम कुप्पू कपिल है । यहाँ से सात जंगल पार से अस्थि बहुल नाम के जंगल से मैं आया हूँ । हमारे वन में बड़ा अकाल पड़ गया है । मेरे बाल–बच्चे भूखे हैं, इसलिये जीविका की खोज में यहाँ तक आ गया हूँ । पेशे से मैं ज्योतिषी हूँ । अस्थि बहुल वन के राजा हमेशा मेरे कहने से कार्य किया करते हैं । उन्हें हर कार्य में सफलता मिलती है ।'

भासुरक कुप्पु की बातों से बड़ा प्रभावित हुआ । उसने हाथ जोड़कर उसे प्रणाम किया । फिर अपना हाथ आगे बढ़ा कर बोला–'पण्डितजी ! मेरा हाथ देखकर भी कुछ बताइये ?'

असल में भासुरक बड़ा आलसी था । वह पड़ा–पड़ा खाता रहता था । वह सोचता था कि परिश्रम करने से क्या लाभ ? भाग्य में जो होगा वह मिलेगा । कपिल से वह यही जानना चाहता था कि उसको जीवन में धन और सुख मिलेगा या नहीं ।

कुप्पू तो पहले से ही भासुरक के विषय में जानता था । उसने भासुरक का हाथ अपने हाथ में लिया, नाक पर चश्मा चढ़ाया और ध्यान से देखने का ढोंग रचने लगा । दो–चार मिनट तक वह मुँह में धीरे–धीरे बुदबुदाता रहा और सिर हिलाता रहा । अब सिंह से न रहा गया । वह बोला–'जोर से स्पष्ट बताइये ।'

'राजन् ! आप तो बड़े ही प्रजा–वत्सल, न्यायप्रिय हैं, परोपकारी हैं, दूसरों के लिये सर्वस्व त्यागने वाले हैं ।' कुप्पू ने सिंह की प्रशंसा के पुल बाँधना प्रारम्भ कर दिया ।

सिंह अपनी तारीफ सुनकर खुशी से फूल कर कुप्पा होने लगा । वह अपनी पूँछ को जोर–जोर से हिलाकर अपनी प्रसन्नता

व्यक्त करने लगा ।

कुप्पू ने मंत्री–सेनापति आदि के विषय में भी पहले से पता कर लिया था । राजा का भी हाथ देखकर उसने सभी के विषय में सच–सच बातें बता दीं । अब तो वे सभी मंत्र मुग्ध से देखते ही रहे । सभी उसकी योग्यता की बड़ी प्रशंसा करने लगे । सारा दरबार वाह–वाह कर उठा ।

बताते–बताते कुप्पू अचानक रुक गया । भासुरक ने सोचा न जाने क्या बात हुई ? उसने कहा–'बताइये ! आप बताते जाइये ।'

'........छोड़िये राजाजी !' हकलाते हुए कुप्पू कपिल ने कहा और राजा का हाथ छोड़ दिया । अपना चश्मा भी उतारकर थैले में रख लिया ।

सिंह घबरा उठा । उसे लगा कि न जाने क्या बात हो गयी है ? वह जल्दी–जल्दी बोला–'क्या बात है आखिर ! हमें भी कुछ तो बताइये ।'

'बात कुछ ऐसी ही है । आपको विश्वास न होगा । आप मुझ पर व्यर्थ ही कुपित होंगे । भगवान न करे कि ऐसा हो ।' कुप्पू बड़ा गम्भीर तथा उदास होते हुए बोला ।

'अरे ! जो भी कुछ हो आप निःसंकोच होकर कहिये ।' भासुरक घबराया–सा बोला ।

क्या बताऊँ राजन् ! अरे यह बात भी मुझे अपने मुँह से ही बतानी थी । बात यह है........बात यह है कि.......कुप्पू हकलाते हुए कहने लगा–'आपके राज्य पर घोर विपत्ति आने वाली है । यदि आपके राज्य में दो–चार दिन में ही आसमान पर धनुष दिखाई देगा तो सभी बरबाद हो जायेंगे । घोर तबाही आयेगी...। अरे मेरे भाग्य में यह देखना भी बदा था ....।' ऐसा कहकर कुप्पू सियार झूठे आँसू बहाने लगा ।

यह सब सुनकर तो भासुरक बड़ा ही घबरा उठा । काँपती आवाज में वह बोला–'इससे बचने का कोई भी उपाय बताइये,

महाराज ।'

'उपाय.....उपाय तो एक ही है ।' अपने माथे पर हाथ रखता हुआ सोचने की मुद्रा में कुप्पू बोला–'वह यह है कि जैसे ही धनुष दिखाई दे तो आप जंगल से सभी जानवरों को लेकर यहाँ से निकल जायें । यहाँ से उत्तर दिशा में आप चलते जायें । दस मील चलने के बाद जो भी जंगल मिले उसी में बस जायें । वहाँ आपकी बहुत ही अधिक उन्नति होगी । इस राज्य से भी अधिक उन्नति होगी । इस राज्य से भी अधिक सुख–सुविधायें मिलेंगी ।

सभी के सभी जानवर कुप्पू की बातें सुनकर भयभीत हो रहे थे । एक शब्द भी उनके मुँह से निकल नहीं रहा था ।

'अच्छा अब मैं चलता हूँ, आपका पथ मंगलमय हो ।' कुप्पू ने कहा और अपना झोला उठा कर चलने लगा ।

भासुरक ने आगे बढ़कर अपने गले से कीमती हार उतारा और पारिश्रमिक रूप में कुप्पु के गले में डाल दिया ।

'हरि ॐ, हरि ॐ ।' कहता हुआ कुप्पू ज्योतिषी वहाँ से जाने के लिये उठ खड़ा हुआ, पर तब तक घनघोर वर्षा प्रारम्भ हो गयी थी । अतएव भासुरक ने उससे राजभवन में अतिथि बनने का निवेदन किया । कुप्पू को और क्या चाहिये था । प्रसन्नतापूर्वक इसके लिये तैयार हो गया । वहाँ उसका खूब स्वागत हुआ । खा–पीकर वह गहरी नींद में सो गया ।

संयोग की बात ! कुप्पु सियार जब शाम को सोकर उठा तो आसमान पर धनुष छाया था । वास्तव में हुआ यह था कि वर्षा तो दोपहर में ही बन्द हो गयी थी । फिर हल्की–सी धूप निकल आयी थी और आकाश में इन्द्र धनुष छा गया था, पर बेचारे जंगल के भोले–भाले जानवर ने कभी आसमान की ओर गर्दन उठाकर इन्द्र धनुष देखा ही न था ।

इतने में राजा भासुरक दौड़ा–दौड़ा आया । उसने तुरन्त ही वहाँ से भागने की सोच ली थी । भासुरक ने कपिल के चरणस्पर्श किये

और अपनी सारी प्रजा को लेकर उस जंगल से विदा हो गया ।

कपिल कुछ देर तक खड़ा–खड़ा उन्हें जाते देखता रहा । जब केवल धूल ही उड़ती दिखाई देने लगी, तो वह खूब अट्टहास करके हँसा । खूब बेवकूफ बनाया । मूर्ख ! जीवन हाथ की रेखाओं से नहीं, कर्म से बनता है ।' मन ही मन कहने लगा ।

फिर सोचने लगा कि जो पुरुषार्थ में नहीं भाग्यवाद में विश्वास रखते हैं, ज्योतिषियों के चक्कर में पड़ते हैं, उनका यही नतीजा होता है । 'मैंने आज खूब उल्लू सीधा किया ।' ऐसा कहकर सियार जोर से ताली बजा–बजाकर नाच उठा ।

फिर वह तुरन्त दौड़कर गया और रात में ही अपनी पत्नी और अपने बच्चों को लेकर उस जंगल में आ गया । सभी जानवरों के घर पूरे सामान से भरे तो पड़े ही थे । वह सियार वर्षों तक वहाँ आराम से रहा ।



मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा